शुभोदय

# शुभोदय

ई-साहित्यिक पत्रिका

## शरद अंक-2022

(Volume-1, issue-2)

प्रस्तुति

सत्यम् शिवम् सुन्दरम्

शुभम्

शुभम्

साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान (पंजी.)

गुलावठी (बुलन्दशहर) उ.प्र. भारत

(Volume-1, issue-2)

ई-साहित्यिक पत्रिका (अर्द्धवार्षिक)
ईमेल: shubhodayashubham@gmail.com

**शरद अंक - 2022**

**संरक्षक**
डॉ. कमल किशोर गोयनका
पूर्व उपाध्यक्ष, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,
भारत सरकार

प्रोफेसर महावीर सरन जैन
पूर्व निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,
भारत सरकार

**प्रधान संपादक**
डॉ. देवकीनन्दन शर्मा
मोबाइल - 9837573250

**संपादक**
डॉ. ईश्वर सिंह
मोबाइल - 9899137354

**सह संपादक**
मुकेश निर्विकार
डॉ. नीलम गर्ग
डॉ. ब्रजराज यादव

**प्रस्तुति**
'शुभम्'
साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान (पंजीकृत)
गुलावठी (बुलन्दशहर), उत्तर प्रदेश, भारत

**डिज़ाइन**
त्रिगुण कुमार झा
मो. : 9810679648



'शुभोदय' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार रचनाकारों के हैं, उनसे 'संपादक मंडल' की सहमति होना अनिवार्य नहीं

# 'शुभोदय' अनुक्रमणिका


सरस्वती वंदना 5
प्रधान संपादक की कलम से 6
संपादक की कलम से 7
प्रो. महावीर सरन जैन से साक्षात्कार 8

## लेख

विजय रंजन 11
विनय शुक्ला 14
डॉ. अंजु दुबे 16
डॉ. ममता शर्मा 18
डॉ. रेखा चौधरी 19
डॉ. बीना माथुर 21
रजनी सिंह 24
अवधेश सिंह 26
योगेंद्र पाल सिंह 29

## हास्य/व्यंग्य

सुधीर कुमार भारद्वाज 30
रवि दत्त गौड़ 31
सुधा गोयल 33
डॉ. वेद प्रकाश 'अमिताभ' 35
नीरज दीक्षित 36

## यात्रा संस्मरण

डॉ. देवकीनंदन शर्मा 37
मधु वार्ष्णेय 39

## कहानी / लघु कथा

डॉ. टी महादेव राव 41
जयश्री बिरमी 44
योगेंद्र कुमार सक्सेना 47
रंजीत चौरसिया 49
पूनम सुभाष 51

## कविता / गज़ल / गीत

संजय शुक्ल 53
जगदीश पंकज 54
शिवानंद सिंह 'सहयोगी' 55
अरविंद कुमार 'विदेह' 56
अलका शर्मा 57
पॉपुलर मेरठी 58
डॉ. ब्रजराज यादव 69
मुकेश निर्विकार 60
एम एम खान 61
श्यामसुंदर श्रीवास्तव 'कोमल' 62
विजय कनौजिया 62
रमेश प्रसून 63
प्रगीत कुंवर 64
डॉ. भावना कुंवर 65
डॉ. सिराजुद्दीन 66
डॉ. इंद्र कुमार शर्मा 'आदित्य' 66
डॉ. केशव कल्पांत 67
ऋषभ शुक्ला 68
डॉ. जितेंद्र 69
मृत्युंजय साधक 70
डॉ. सुरेंद्र दत्त सेमल्टी 70

## साहित्यिक हलचल/पुस्तक समीक्षा

डॉ. देवकीनंदन शर्मा 71
डॉ. रामविचार यादव 72
डॉ. ईश्वर सिंह 74

शुभोदय

# वर दे...

वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

काट अंध-उर के बंधन-स्तर,
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर,
जगमग जग कर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

नव गति, नव लय, ताल-छंद नव
नवल कंठ, नव जलद-मन्द्ररव,
नव नभ के नव विहग-वृंद को,
नव पर, नव स्वर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

– सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

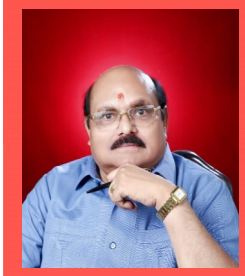

# प्रधान संपादक की कलम से

## औरों को हँसते देखो .....

साहित्य, भाव; विचार; कल्पना; और शिल्प की मोहक रंगोली है; जिसमें भरे सद्भाव, समरसता, एकता, मंगल और उन्नयन के रंग हमें सम्मोहित ही नहीं करते, बल्कि समाज, राष्ट्र और विश्व की समृद्धि और सशक्तता की ओर उन्मुख एवं उत्प्रेरित भी करते हैं। इसी सन्मार्ग की ओर कदम बढ़ाते हुए, 'शुभम्' साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान, गुलावठी, बुलंदशहर (उत्तर प्रदेश) ने वसंतोत्सव (5 फरवरी 2022) पर 'शुभोदय' ई साहित्यिक पत्रिका का शुभारंभ किया था। हमारे इस सारस्वत अनुष्ठान को देश विदेश के अनेकानेक सुधी अध्येताओं ने, न केवल मुक्त कंठ से सराहा बल्कि समय के कैनवास पर शुभम् की साधिकार उपस्थिति भी बताया।

और अब हम शरदोत्सव (9 अक्टूबर 2022) के पावन पर्व पर 'शुभोदय' का द्वितीय अंक आपके हाथों में सौंपते हुए हर्षित और गर्वित अनुभव कर रहे हैं।

आइए, शुभोदय में विन्यस्त साक्षात्कार, लेख, व्यंग्य, संस्मरण, कहानी, कविता, गीत, गजल, और समीक्षा आदि की धवल चाँदनी में अपने मन-अंतर्मन की उदात्त अभिवृत्तियों का रास रचायें और महाकवि जयशंकर प्रसाद के आह्वान को आत्मसात करें :

**“औरों को हँसते देखो**
**मनु हँसो और सुख पाओ**
**अपने सुख को विस्तृत कर लो**
**सब को सुखी बनाओ”**

**श्रीमत्कुंज विहारणै नम:**

**डॉ. देवकीनंदन शर्मा**
प्रधान संपादक

# संपादक की कलम से

# पूरी धरा भी साथ दे तो.....

अंग्रेजी में एक कहावत है 'Well begun is half done'. 'शुभोदय' का 2022 का शरद अंक हाथ में लेकर मुझे बिल्कुल ऐसी ही अनुभूति हो रही है। इस साहित्यिक ई-पत्रिका को प्रारंभ करने से पहले बहुत शंकाएँ और बहुत सी अड़चनें सामने थीं, किंतु पत्रिका का प्रवेशाँक निकलते ही यह आभास हो गया कि यदि ठान लिया जाए तो असंभव जैसा कुछ भी नहीं है। 'आदमी खुद ही रुक जाए, ये अलग बात है, वरना उसकी बुलंदियों की कोई इंतहा नहीं होती।' सभी विद्वजन पाठकों और वरिष्ठ साहित्यकारों के सहयोग से 'शुभोदय' की कारवां बखूबी गति पकड़ चुका है।

जैसा कि विदित है 'शुभोदय' के वर्ष में दो अंक, 'वसंत अंक' और 'शरद अंक' जारी करने का निर्णय लिया गया है। 'शरद अंक' आपके हाथों में सौंपते हुए प्रसन्नता के साथ-साथ परीक्षक के हाथों में उत्तर पुस्तिका सौंपते हुए बढ़ने वाली धड़कनों को महसूस कर रहा हूँ। इस पत्रिका के कलेवर में आप कुछ बदलाव महसूस करेंगे। पिछले अंक में जो पद्य का आधिक्य हो गया था, उसे इस बार संतुलित किया गया है और साथ ही यात्रा संस्मरण, साहित्यिक हलचल, पुस्तक समीक्षा और साक्षात्कार जैसी विधाओं का समावेश किया गया है। एक और बात जो आपका ध्यान आकर्षित करेगी, वह यह है कि देश के सुदूर हिस्सों और विदेशों में बसे साहित्यकारों की रचनाएँ भी इस अंक में शामिल हैं जो हमारी पत्रिका को गरिमा प्रदान कर रही हैं।

मैं 'शुभोदय' के संरक्षक मंडल, प्रो. महावीर सरन जैन और डॉ. कमल किशोर गोयनका के प्रति उनके सतत् मार्गदर्शन के लिए तथा संपादक मंडल के सदस्यों के प्रति उनके सहयोग के लिए हृदय से आभार ज्ञापित करता हूँ ।

आपका प्रतिक्रियाओं के माध्यम से मिलने वाला स्नेह, हमारी ऊर्जा है। डॉ. कुँवर बेचैन की इन पक्तियों से आपके निरंतर स्नेह, सहयोग और सुझावों की अपेक्षा करता हूँ :

**पूरी धरा भी साथ दे तो और बात है**
**पर तू जरा भी साथ दे तो और बात है**
**चलने को तो एक पाँव पर भी चल रहे हैं लोग**
**पर दूसरा भी साथ दे तो और बात है**

**डॉ. ईश्वर सिंह**

संपादक

# हिन्दी भारतीय भाषाओं को एकता के सूत्र में बाँध सकती है - प्रो. जैन

किसी भी भारतीय नागरिक के आत्मसम्मान और राष्ट्रगौरव को यह जानकार जरूर ठेस लगेगी कि एक राष्ट्र के रूप में हमारे पास कोई राष्ट्रभाषा नहीं है। संविधान की 8वीं अनुसूची में जो 22 भाषाएँ दर्ज हैं वे सभी समान हैं। हिंदी को संघ की राजभाषा का दर्जा तो अवश्य प्राप्त है किंतु राष्ट्रभाषा का नहीं। इसी विषय पर हमने सुप्रसिद्ध भाषाविद् प्रो. महावीर सरन जैन के मन को टटोलने की कोशिश की है। प्रस्तुत है इस विषय पर प्रो. महावीर सरन जैन के साथ 'शुभोदय' संपादक डॉ. ईश्वर सिंह और सह-संपादक मुकेश निर्विकार के साक्षात्कार के कुछ अंश:

**शुभोदय**: 'हिंदी ही राष्ट्रभाषा क्यों हो' पर आने से पहले हम आपसे यह जानना चाहेंगे कि आपने बहुत से देशों का दौरा किया और उन देशों की राष्ट्रभाषा के स्थिति का भी अध्ययन किया होगा, क्या आप भारत के अलावा किसी और ऐसे देश को जानते हैं जिसकी अपनी कोई राष्ट्रभाषा न हो?

**प्रो. महावीर सरन जैन**: भारत जैसे बहुभाषी देश में किसी एक भाषा को राष्ट्रभाषा घोषित करने पर उसकी राजनीतिक प्रतिक्रिया हो सकती है, इसमें कुछ लोग स्वयं को उपेक्षित महसूस कर सकते हैं। अधिकारिक रूप से भले ही हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित नहीं किया गया है किंतु व्यावहारिक रूप से हिंदी राष्ट्रभाषा ही है। स्वाधीनता आंदोलन का नेतृत्व जिन नेताओं के पास था उन्होंने यह पहचान लिया था कि विगत 700-800 वर्षों से हिंदी ही एक ऐसी भाषा है जो पूरे देश में बोली व समझी जाती है और इसीलिए उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन की संपर्क भाषा के रूप में हिंदी को ही चुना था। स्वाधीनता आंदोलन का रथ जैसे-जैसे आगे बढ़ा वैसे-वैसे हिंदी राष्ट्रीय चेतना की भाषा के रूप में उभर कर आई। तब हिंदी राष्ट्रभाषा ही थी। स्वतंत्रता के बाद वह राजनीति के दलदल में फंस गई। इंग्लैंड, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, आयरलैंड और अमेरिका को छोड़कर किसी भी देश की राष्ट्रभाषा अंग्रेजी नहीं है।

**शुभोदय:** यद्यपि संघ की राजभाषा नीति में और राजभाषा अधिनियम 1963 में हिंदी को संघ की राजभाषा का दर्जा दिया गया है किंतु संविधान की 8वीं अनुसूची में वह उसी प्रकार शामिल है जिस प्रकार अन्य 22 भाषाएँ हैं। इसे आप किस रूप में देखते हैं?

**प्रो. महावीर सरन जैन:** संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएं हैं किंतु संघ की राजभाषा हिंदी है जो देश भर के केंद्र सरकार के कार्यालयों में प्रयोग की जा रही है, यह तथ्य देश में हिंदी की स्थिति को बहुत कुछ स्पष्ट कर देता है। इसके बाद आप हिंदी को अन्य भाषाओं के बराबर नहीं मान सकते। सभी भाषाओं का सम्मान करते हुए भी संविधान ने हिंदी के महत्व को पूरी तरह प्रतिपादित किया है। मैं यहाँ यह जोर देकर कहना चाहता हूँ कि हिंदी का राजभाषा का दर्जा उन नेताओं के कारण मिला जिनकी मातृभाषा हिंदी नहीं थी। महात्मा गाँधी , सुभाषचंद्र बोस, मदन मोहन मालवीय, केशनचंद सेन, रविंद्रनाथ ठाकुर, लाला लाजपत राय, सुब्रहमण्यम भारती, राजाराम मोहन राय, विपिनचंद्र पाल, स्वामी

दयानंद, लोकमान्य तिलक, सत्यनरायाण मूर्ति आदि सबने यह पहचान लिया था कि हिंदी के द्वारा ही राष्ट्रीय एकता स्थापित हो सकती है।

साक्षात्कार लेते हुए शुभोदय संपादक डॉ. ईश्वर सिंह

**शुभोदय:** भारत के बहुभाषी देश है और भाषा को लेकर हिंदीतर भाषी राज्यों की जनता बहुत संवेदनशील है। ऐसे में बहुसंख्यक वर्ग की भाषा को यदि राष्ट्रभाषा बना दिया जाएगा तो हिंदीतर भाषी राज्यों के लोगों को अपने हित असुरक्षित लगेंगे। इस समस्या का आप क्या हल देखते हैं?

**प्रो. महावीर सरन जैन:** इसी संवेदनशीलता को देखते हुए, हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित नहीं किया गया है। इसीलिए सरकार की राजभाषा नीति के प्रचार प्रसार का आधार प्रेरणा, प्रोत्साहन और सद्भाव बनाया गया है। भारत में सभी भाषा भाषाइयों के हित पूरी तरह सुरक्षित रहें इसी बात का ध्यान संविधान में रखा गया है। मेरा मानना है कि हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रश्न अब बेमानी हो गया है। अब हिंदी को अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित करने की दिशा में हम प्रयत्नशील हैं।

**शुभोदय:** हिंदी और उर्दू के संबंध को आप किसी रूप में देखते हैं। बोलचाल में तो ये एक जैसी ही दिखाई देती है?

**प्रो. महावीर सरन जैन:** हिंदी और उर्दू अलग अलग भाषाएँ नहीं हैं। इनमें केवल लिपि का अंतर है। किसी भी भाषा को किसी भी लिपि में लिखा जा सकता है। आजादी के आंदोलन के समय दिल्ली के चारों ओर हिंदी और उर्दू में परचे बाँटे गए थे। यह अंग्रेजों की चाल थी, जिसका एतिहासिक प्रमाण है, जिसमें उन्होंने एक व्यक्ति से कहा कि तुम ऐसी भाषा लिखों जिसमें अरबी और फारसी के शब्द न आएँ और दूसरे से कहा कि आप ऐसी भाषा लिखों जिसमें संस्कृत के शब्द न आएँ और इस प्रकार उन्होंने हिंदी और उर्दू का अलग अलग रूप दे दिया। भाषिक दृष्टि से दोनों भाषाएँ एक ही हैं। केवल लिपि के अंतर से भाषा भेद नहीं हो जाता।

**शुभोदय:** क्या ऐसा संभव नहीं है कि जिस प्रकार हिंदी के राजभाषा बनने के बाद भी कार्यालयों में उसका उपयोग बहुत कम हो रहा है, उसी प्रकार राष्ट्रभाषा बनने के बाद भी हिंदी इसी प्रकार अंग्रेजी के मुकाबले दोयम बनी रहे?

**प्रो. महावीर सरन जैन:** यह सही है कि कई बार हिंदी के मुकाबले अंग्रेजी को अधिक महत्व मिल जाता है। इसके लिए हम सब को अपने भाषाई गौरव को महसूस करना होगा और हिंदी के प्रयोग में राष्ट्रीय गौरव की अनुभूति करना होगी।

**शुभोदय:** भारत सरकार संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी का मान्यता दिलाने का प्रयास कर रही है। हम स्वयं अपने देश में इसे राष्ट्रभाषा का दर्जा नहीं दे पा रहे हैं तो इसके लिए अंतरराष्ट्रीय दर्जा माँगने में आप कोई तर्कसंगतता देखते हैं?

**प्रो. महावीर सरन जैन:** इस बारे में मैं यही कहना चाहता हूँ कि हमें पहले अपना घर मजबूत करना होगा। यह बडी विसंगति है कि विदेशों में तो हिंदी भाषा का अध्ययन और अध्यापन हो रहा है। केंद्रीय हिंदी संस्थान से 76 देशों के 5 हजार प्रशिक्षक आगरा में रहकर हिंदी का प्रशिक्षण करके अपने देश जा चुके। वहाँ पर हिंदी में काम हो रहा है और अपने घर में हिंदी को तोड़ने के प्रयास हो रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय भाषाओं में एकता के सूत्र तलाशे जाने चाहिएं।

**शुभोदय**: हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से केंद्र सरकर की नौकरियों में हिंदीतर भाषी राज्यों के युवाओं के अवसरों पर आप क्या कहना चाहेंगे?

**प्रो. जैन**: अब हिंदी को राष्ट्रभाषा से अधिक संयुक्त राष्ट्र की मान्यता प्राप्त 6 भाषाओं के साथ अधिकारिक भाषा बनाया जाए। यह इसलिए भी जरूरी है हिंदी भाषी लोगों की संख्या उन भाषाओं के बोलने वालों से कहीं अधिक है जिन्हें यूएनओ में मान्यता प्राप्त है। जब हिंदी एक बार यूएनओ की भाषा बन जाएगी तो वह यूएनओ की सभी संस्थओं की भाषा बन जाएगी और फिर हिंदी के पक्ष में पूरा परिदृश्य ही बदल जाएगा।

**शुभोदय**: हिंदी को राष्ट्रभाषा या अंतरराष्ट्रीय भाषा बनाने की दिशा में क्या प्रयास किए जाने चाहिए?

**प्रो. जैन:** हिंदी को रोका नहीं जा सकता। वह स्वत: राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्थापित हो रही है। आज विश्व के अनेक देशों में हिंदी भाषी लोग रहते हैं वे सब हिंदी का प्रयोग कर रहे हैं। दूसरे देशों की सरकारें अपने लोगों को हिंदी सीखने के लिए भारत भेज रही हैं। विश्व एक गाँव बन गया है और इस गाँव की दूसरे नंबर की सबसे बड़ी भाषा को कोई ताकत नजरंदाज नहीं कर सकती।

**शुभोदय:** आज हिंदी में दूसरी भाषाओं के शब्दों का बहुतायत में प्रयोग हो रहा है। भाषाई शुद्धता की दृष्टि से आप इसको किस प्रकार देखते हैं।

प्रो. जैन : जब दो संस्कृतियों के लोग मिलते हैं, परस्पर संवाद करते हैं तो एक भाषा के शब्द दूसरी भाषा में जाते हैं। यह स्वाभाविक है। भाषा की इस विकास यात्रा में दुराग्रह के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता।

**शुभोदय:** तकनीकी और प्रोद्यौगिकी के क्षेत्र में हिंदी में पुस्तकें और शिक्षा की अनुपलब्धता को आप किस रूप में देखते हैं? क्या हिंदी को रोजगार की भाषा नहीं बनाया जाना चाहिए?

**प्रो. जैन:** विश्वविद्यालयों में एक विषय प्रयोजनमूलक हिंदी के रूप में पढ़ाया जा रहा है, जो बहुत महत्तवपूर्ण है।

**शुभोदय:** अंतिम और मूल प्रश्न, हिंदी ही राष्ट्र भाषा क्यों? कोई दूसरी भाषा क्यों नहीं?

उत्तर : ऐसा इसलिए कि भारत में हिंदी भाषियों की संख्या अन्य किसी भी भाषा के बोलने वालों की तुलना में अधिक है। संपर्क भाषा के रूप में वह पहले से ही स्थापित है और अन्य किसी भी भाषा की तुलना में देश के हर कोने में, वहाँ की क्षेत्रीय भाषा को छोड़कर, अधिक बोली व समझी जाती है। साथ ही **हिंदी में वह क्षमता है कि वह समस्त भारतीय भाषाओं को एक सूत्र में बाँध सकती है।**

**शुभोदय संपादक**: शुभोदय पत्रिका के लिए अपना बहुमूल्य समय देने के लिए, शुभोदय संपादक मंडल की ओर से मैं आपके प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

साक्षात्कार के अवसर पर संपदाक मंडल के साथ प्रो. महावीर सरन जैन

विजय रंजन
फैजाबाद, अयोध्या, उ॰प्र॰
दूरभाष: 8874830492

# राजनीति से नहीं नीति से सरोकारित होता है साहित्य

वर्तमान भौतिकतावादी कथित आधुनिक, उत्तर आधुनिक युग में 'विचारों का अंत', 'इतिहास का अंत' आदि के उद्गार पश्चिमि बौद्धकों के विचार-आचार में स्थानित हो चुके हैं। फलतः भौतिक सुखोपभोग की लिप्सा का अति बलवान हो जाना आश्चर्यप्रद नहीं रह गया है। दूसरी ओर, 'राजनीति' में भौतिक सुख-साधन की लब्धि का अवसर भरपरू लभ्य है। अतएव, ऐसी चकाचैंध में ऋषिक मनस्विता वाले साहित्यकार का विभ्रमित होकर सत्ताशीर्ष से जुडने और 'राजनीति' की ओर आकृष्ट होने की सम्भावना को नकारा नहीं जा सकता। तद्वत, सच कहें तो कि साहित्यकार हो या कोई अन्य कथित विचारवान्, आज के परिवेश में राजनीति से पूरी तरह स्वयं को सहजता से विलग रख नहीं सकता। ऐसी दशा में साहित्य या साहित्यकार का सत्ता शीर्ष या राजनीति से जुड़ाव कितना उचित होगा? वामपंथी वी. आई. लेनिन या कि उनके कतिपय अनुयायी 'साहित्य' को 'पार्टी लाइन के साहित्य' तक भले सीमित मानें लेकिन सन्दर्भगत विषय पर सम्यक् दृष्टिनिपात से स्पष्ट हो जाता है कि वास्तव में साहित्य समग्रतया 'स+हित भाव' का अर्थात् 'समाज-हिती सार्वहिती भाव' का एक वैचारिक आक्षरिक उपक्रम है।

साहित्य एक ऐसी आक्षरिक क्रिया, अभिक्रिया, प्रतिक्रिया है, जो मूलतया सामाजिक और सार्वजनीन है; जो समाज का 'समग्र हितसाधन' कर सके, वहीं 'राजनीति' राजकाज-संचालन की नीति है जिसमें सत्ता-संचालन और अधिकतमतः सत्ता-प्राप्ति का व्यावहारिक स्वरूप निगमित होता है। इन दोनों के गुण-धर्म में भी भारी मौलिक अन्तर है।

साहित्यिक सांस्कारिक उच्च मनोदशा के प्राचीन युग में काव्य कहते थे उस इयत्ता को जिसे हम आज सामान्यतया 'साहित्य' के नाम से अभिहित करते हैं। विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ ऋक् वेद में काव्य को रूपायित करते हुए कहता है- 'स कविः काव्या पुरुरूपम् द्यौरिव पुष्यति' (कहीं-कहीं द्यौरिन पुष्यति पाठ भी है)। श्वेताश्वतर उपनिषद में कहा गया है – 'छन्दांसि यज्ञा: .... भूतम भव्यम सृजते ... विश्वमेत:। आदि-महाकवि वाल्मीकि ने लोकहितकारी काव्य 'रामायणम्' विरच कर 'काव्य (साहित्य) को लोक से और लोक हित से जोड़ा था। आचार्य भरत साहित्य को 'लोकधर्मी और विश्रांतिदायक' बताते हैं। आचार्य दंडी-प्रणीत 'इहं शिष्टानुशिष्टानाम शिष्टानामपि सर्वदा',आचार्य भामह -प्रणीत 'प्रादुष्कृतमन्यथा' और आचार्य मम्मट-प्रणीत 'शिवेतर क्षतए', 'व्यवहारविदे ' भी निकट-दूर से लोक और लोक हित से ही सम्बद्ध हैं। राजा भोज के अनुसार साहित्य 'दुष्प्रवृत्तियों का परिशोधक (परिष्कारक)' होता है। कविकलु गुरु कालीदास इसे 'सद्-संस्कारशील- एवम् – सद्-संसकारप्रदायी' कहते हैं। उपरोक्त विचारों के समापवर्तक के आधार पर कह सकते हैं कि साहित्य

का विन्यास-परास वैयक्तिक से बढ़कर सामुदायिक या कि सम्पूर्ण सृष्टि तक व्याप्त होता है।

प्रकटतः साहित्य/काव्य के अर्थ या कि उसके विन्यास-परास आदि के सन्दर्भ में भारतीय मनीषा में किसी भ्रम-विभ्रम की स्थिति नहीं है, तथापि कतिपय पाश्चात्य विचारक जो 'जीवन को एक संघर्ष' मानते हैं, जो 'सक्षमतम के अस्तित्व' या कि 'अवश्यंभावी वर्ग-संघर्ष' के अलम्बरदार हैं साहित्य के क्षेत्र में विभ्रमित वैचारिक अपदूषण फैलाते रहते हैं। साहित्य/काव्य को वर्ग-संघर्ष का हथियार बताना/बनाना भी ऐसा ही एक अपदूषण है।

वामपंथी वी आई लेनिन के समय से उनके अनुयाययियों के एक संवर्ग-विशेष के साहित्यकारों द्वारा 'साहित्य को दलीय सिद्धान्तों के प्रचार का संसाधन' बताया जाता रहा है। इनका फतवा था कि 'साहित्य सत्ता-विरोध का पर्याय' है। दुर्योग से, आज भी भारतीय वामपंथी विचारक 'स+हित भाव' का परचम लहराते हुए और 'सत्ता पक्ष के राजनैतिक विरोध के लिए विरोध को साकार करते हैं। साहित्य को नए ढगं से परिभाषित करने में उनकी जो वामपंथी प्रतिबद्धता है उसी का दुष्फलित है आलोच्य उवाच/आचरण ! साहित्य को सत्ता-विरोध का पर्याय बताने का अर्थ साहित्य/काव्य को सीधे- सीधे राजनीति से प्रतिबद्ध कर देना है। एक तरह से आलोच्य उवाच् साहित्य के विन्यास और साहित्य के मौलिक परास से नितान्त विपरीतधर्मी है। साहित्य का परास – विन्यास राजनीति से नहीं नीति से संबंधित होता है।

अभिधरतः स्पष्ट है कि साहित्य की नीति-रीति उपर्युक्त दोनों विन्यासों में सत्त्वतः लोक का समुचित हित-साधित करने वाली होनी चाहिए। स्मरणीय है कि साहित्य 'हितम् – अत्यंतम' वाले सत्य का रूपायन करता है जबकि प्लेटो सत्य वही मानते हैं जो कभी धूमिल न हो। साहित्य को इस सीमा का सत्य न माना जाए तो भी साहित्य के स+हित भाव को सत्ता-विरोध मात्र मानने पर कई प्रश्न उठेंगे। राज्य/सत्ता के 'जन-कल्याणकारी होने की अवधारणा के पश्चात् साहित्य को मात्र 'विरोध के लिए विरोध' का कोई औचित्य नहीं है। आज जो राजनैतिक परिदृश्य है, उसमें सत्ता विलग की दुष्कृति के निरोध-विरोध को क्या इसलिए त्याग दिया जाए कि दुष्कृति कर्ता सत्ताधारी नहीं है। आदि-महाकवि वाल्मीकि ने आदि-श्लोक में क्रौंच-वधिक निषाद को जो श्राप दिया 'मा निषाद प्रतिष्ठाम्त्वम् ...', वह निषाद सत्ताधारी था क्या? यह भी देखना होगा कि हमारे देश में राजनैतिक विरोध का आलम क्या है? 'सत्ता के विरोध' के नाम पर जनता के खनू-पसीने का करोडों रुपया 'संसद-कार्यवाही भंग' में नष्ट कर दिया जाता है! क्या ऐसे आदर्श को साहित्य का मानक बनाना उचित होगा? ..

साहित्य को 'मूल्यों का देश' मानने वाले, साहित्य अकादमी के निवर्तमान अध्यक्ष डा॰ विश्वनाथ तिवारी ने अपने एक निबन्ध में ठीक कहा है कि 'राज्य का तानाशाही रूप', 'समाज का संकीर्ण रूढ़िवादी रूप', 'धर्म का कर्मकाण्डीय और साम्प्रदायिक रूप' तथा 'विचारधारा का कट्टर पार्टीवादी रूप'रचनाकार के शत्रु हैं। प्रत्यतु इनमें से एक भी रचनाकार की कौन कहे, रचनाधर्म, रचनाकर्म तक बाधित कर सकता है।

आज सामर्थ्यवान् राजनेता अपने प्रतिकूल दिखाई पड़ने वाले साहित्यकार की साम, दाम, दण्ड,भेद से घेराबन्दी (अवसर मिलने पर भरपूर प्रताड़ित भी) करने लगता है। बोरिस पास्तरनाक को साइबेरिया भेजा जाना, नाजिम हिकमत को जेल में बन्द किया जाना आदि ऐसे ही अधुनातन उदाहरण हैं। साहित्यकारों की कृतियों/रचनाओं को प्रतिबन्धित किया जाना भी ऐसे ही उदाहरण हैं। वर्तमान में सक्षम सत्तासीन राज्यशक्ति यथावसर पुरस्कार अनुदान आदि से या कि सत्ता-केन्द्र में सहभागिता का प्रलोभन देकर भी

साहित्यकार को अपने अनुकूल बनाने का भी कार्य करती है, परन्तु ऐसे भय, प्रलोभन के वशीभूत जैसे ही साहित्यकार अपनी कलम गिरवी रख देता है, उसकी रीढ़ की हड्डी को झुक जाना पड़ता है। उससे वस्तुनिष्ठ साहित्यिक मूल्यों के संरक्षण की आशा भी धूमिल हो जाती है। और देखें,1920 में लेनिन ने एक पुस्तक लिखी थी 'वामपंथी कम्युनिज्म: एक बचकाना मर्ज'। इस कृति में लेनिन ने 'विरोध के लिए विरोध' करने वाले वामपंथियों को 'मेन्शेविक' कहा है। इसी कृति में उन्होंने वामपंथ को एक बचकाना मर्ज बताते हुए उपरि इंगित सत्ता-विरोधियों का खुल कर विरोध किया है। त...ब, 'साहित्य को सत्ता का विरोध पक्ष' मानने-बताने और प्रचारित करने का औचित्य क्या है? 'साहित्य' समाज के नैतिक सत्य की रक्षा करता है। किसी छद्म के सहारे समाज और स्वयं साहित्य के नैतिक सत्य की रक्षा काव्य/साहित्य कैसे लभ्य करेगा? ध्यान रहे, नैतिक जीवन की जीवन्त मानवीय विनिर्मिति, तद्भूत पोषण आदि

विचक्ष्य है कि आदर्शवाद, नैतिक दृष्टि, पुण्यपरक अनुशासन का प्रश्न हो या जीवन का मर्म उठाने वाला प्रश्न या जीवन की आलोचना का प्रश्न या कि हितम्-अत्यन्तम् वाला लोकहित आदि का प्रश्न--- ऐसे सारे प्रश्न साहित्य में राजनीति के घालमेल से या साहित्य को छाद्मिक स्वरूप में राजनीति में ढ़ालकर साहित्यिक ढ़ंग से विचारित किए नहीं जा सकते। 'साहित्य' समाज के नैतिक सत्य की रक्षा करता है। किसी छद्म के सहारे समाज और स्वयं साहित्य के नैतिक सत्य की रक्षा साहित्य कैसे करेगा?

वस्तुतः ऊर्ध्ववाही, सत्त्वशील, शिवशील, ऋतशील, नयशील सार्वसुन्दरम् के समवेत की अक्षराराधना वाला औ...र, 'नैतिकतावादी लोकहित सह लोक हितवादी नैतिकता' से सर्वदा सम्पृक्त रहने वाला साहित्य किसी सत्ता-पक्ष या विरोध-पक्ष के अंध-विरोध या अंध-समर्थन की अनुमति नहीं देता। प्र ...त्यु ...त, यह भोर के अन्वेषी और कलम के सिपाही को असत्, अशिव, अनय, अनुचित सदृश दुष्कृति के निरोध, निषेध के लिए औचित्यपूर्ण निरपेक्षता के साथ सर्वदा सन्नद्ध रहने का निर्देश देता है। उसे सार्वहिती प्रादुष्कृतमन्यथा एवं शिवेतर की क्षति तक और लोक-व्यवहारविद् बनाने तक और लोक यात्रा के सुप्रवर्तन तक ही विन्यसित रखा जाए, यही श्रेयस्कर होगा और लोकहिती भी और साहित्य की निजी मौलिक प्रकृति-प्रवृत्ति के समानुरूप भी।

**आधार ग्रन्थ**


- कविता क्या है: विजय रंजन
- पाश्चात्य साहित्य चिन्तन: डॉ. निर्मला जैन, डॉ. कुसुम बांठिया
- भारतीय एवम् पाश्चात्य काव्य शास्त्रः डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त
- भारतीय काव्य शास्त्र: योगेंद्र प्रताप सिंह
- भारतीय साहित्य की भूमिका: डॉ. रामबिलास शर्मा
- रचना और आज की चुनौतियाँ: डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय
- राजनीति शास्त्र के सिद्धान्त: भाग 1 व 2: हृदयनारायण सभरवाल, डॉ.रामगुलाम गुप्त
- वामपंथी कम्युनिज्म: वी. आई .लेनिन
- संकलित निबन्ध: डॉ. विश्वनाथप्रसाद तिवारी
- संस्कृत हिन्दी शब्दकोश: वामन शिवराम आप्टे
- साहित्य और हमारा समय: कुँवर पाल सिंह
- साहित्य सिद्धान्त: रेने वेलेक,आस्टिन वारेन, अनुवादः बी.एस. पालीवाल

विनय शुक्ला
मास्को – सोवियत संघ
मो. 9873756808

# आधुनिक रूसी भाषा में प्राचीन संस्कृत की गूँज

आज से कोई छः दशक पहले स्कूली शिक्षा संपन्न करके जब मैंने दिल्ली के रूसी अध्ययन संस्थान (संप्रति जवाहर लाल नेहरू विश्विद्यालय का अंग) में प्रवेश लिया तो पहले ही दिन से बड़ा आश्चर्य हुआ अनेक रूसी शब्दों की समानता संस्कृत से पाकर। रूसी में अगोन शब्द का अर्थ अग्नि होता है, द्वेर का द्वार; ब्रात; का मतलब होता है भाई। यह तो शुरुआत थी। असली ज्ञान मुझे मास्को विश्विद्यालय में रूसी भाषा के गहन अध्ययन के दौरान मिला।

मास्को में पहले रूसी छात्रों से परिचय हुआ तो उनमें से एक का कुलनाम व्दोविन था, जब मैंने पूछा कि उसके नाम का क्या अर्थ है तो उसने बताया कि रूसी भाषा में व्दोवा; का अर्थ होता है विधवा और विधवा के वंशज को व्दोविन कहते हैं। उसने यह भी बतलाया कि रूसियों में मान्यता है कि एक ज़माने में भारतवंशियों और प्राचीन रूसियों की संस्कृति एक जैसी थी। रूसी भाषा में वेद; का मतलब ज्ञान (ज्ञानी) होता है।

आप में से कुछ तो अवश्य जानते होंगे एक रूसी राष्ट्रपति दमित्री मेदवेदेव का नाम, तो उनके कुलनाम का अनुवाद होता है, मधुवेदी का वंशज। 9वीं शताब्दी के उत्तरार्थ और 10वीं शताब्दी के प्रारंभ में ईसाई धर्म के प्रचलन तक रूसी मूर्तिपूजक और प्रकृति उपासक थे और रीछ (भालू) के नाम को लेना वर्जित था इसीलिए उसे मेदवेद (यानी मधु का वेदी) कह कर बुलाया जाता था क्योंकि सुविदित है कि रीछ जंगलों मे मधुमक्खियों के छत्तों को ढूंढकर शहद खाने का शौकीन है। प्राचीन रूस में लकड़ी की बनी विशालकाय मूर्तियों की पूजा की जाती थी और आपको शायद यह जानकर आश्चर्य होगा कि इन मूर्तियों को बलवान कहा जाता था, हालांकि आधुनिक रूसी भाषा में बलवान का मतलब बुद्धू हो गया है ठीक वैसे ही जैसे गौतम बुद्ध के अनुयायियों को सनातन धर्म के रक्षक मानते थे। रूसी क्रिया बूदीत का अर्थ होता है जगाना और बुद्ध का अर्थ कम से कम किसी लिखे पढ़े रूसी की समझ में जागृत होगा। श्वेता आजकल काफी प्रचलित नाम है, रूसी भाषा में स्वेता नाम की अनेक युवतियां आपको मिलेंगी और दोनों नामो का एक ही अर्थ है।

सर्वविदित है कि लिपियों के अंतर के बावजूद रूसी भाषा और संस्कृत, हिंदी समेत In-do-European परिवार की भाषाएं हैं जिनमे

फारसी, अंग्रेजी, जर्मन और इतालवी भाषाएँ भी शामिल हैं परंतु रूसी और संस्कृत-हिंदी का रिश्ता सबसे घनिष्ट है। उत्तरी रूस में जहाँ के कुछ इलाकों में छः महीने का दिन और छः महीने की रात होती है, मुझे कई स्थानों के नाम इतने जाने पहचाने से लगे जिनका अर्थ वहाँ के आज के निवासी नहीं समझते, उदाहरण के लिए कंदालाक्षा, कस्तामोक्षा;, छोटी बड़ी नदियां - पद्मा, सुखोना, गंग, द्विना (दो नदियों के संगम से बनी एक)। मास्को से लगभग दो सौ किलोमीटर दूर एक नगर है त्वेर वह महान रूसी नदी वोल्गा और तीव्र नदी के संगम पर बसा है। जब पहली बार अपनी यात्रा के दौरान स्थानीय निवासियों से पूछा की उनकी इस तीव्र; नदी का क्या अर्थ है जिसने उनके नगर को नाम दिया तो उन्होंने बताया की बहुत तेज प्रवाह है इस नदी का।

पुरानी पीढ़ी के लोग अक्सर हिंदी-रूसी भाई भाई के नारे को सुन चुके हैं परंतु इसके वास्तविक आधार हैं, यूरेशिया में मंगोलों, अरबों के हमलों के कारण प्राचीन रिश्ते ठंडे जरूर पड़े फिर भी कम से काम दो सदियों से रूसी विद्वान इस दिशा में बहुत शोध कर रहे हैं। फिलहाल हम एक चीज विश्वास के साथ कह सकते हैं कि रूसी भाषा एक मात्र यूरोपीय भाषा है जिसकी व्याकरण का ढांचा संस्कृत जैसा है। जब हम स्कूल में पढ़ते थे तो अक्सर कहते थे -फलम, फले, फलानी - संस्कृत कभी न आनी! रूसी भाषा में भी संस्कृत की तरह अनेक कारक होते हैं जैसे कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण। दुख होता है कि काश स्कूल में भी रूस की तरह व्याकरण पढ़ने की विधि भारत में भी अपनाई गई होती तो भारत में बच्चों को संस्कृत का अच्छा ज्ञान होता।

डॉ. ममता शर्मा
मेरठ—उत्तर प्रदेश
मो. 9412486032

# नारी तू संघर्ष है

'शुभोदय' में अपना लेख प्रस्तुत करते हुए अंग्रेजी साहित्य में पढ़ी हुई एक उक्ति बार-बार मेरे अंतर्मन में गूँज रही है 'Frailty thy name is women' अर्थात, 'कमजोरी तेरा ही नाम स्त्री है।' इसका दूसरा अर्थ यह भी है कि 'बेवफाई तेरा नाम ही नाम औरत है।' यह उक्ति विश्व प्रसिद्ध अंग्रेजी नाटककार विलियम शेक्सपियर के अत्यंत लोकप्रिय दुखांत नाटक हैमलेट में राजा हैमलेट के पुत्र राजकुमार हैमलेट द्वारा कहीं गई है। नाटक में इसकी पृष्ठभूमि यह है कि डेनमार्क के राजा की हत्या उनका सगा भाई, क्लोडियस कर देता है और एक महीने के अंदर ही राजा हैमलेट की पत्नी ग्रट्यूड अपने पति के हत्यारे से शादी कर लेती है। यह बहुत अतार्किक प्रतीत होता है। उस समय ग्रट्यूड को अपने पति के हत्यारे के बारे में शायद पता नहीं था, लेकिन शादी करना तो अनुचित था ही। उसके पुत्र हैमलेट को जब इसका पता चलता है तो वह अपनी माँ और चाचा से घृणा करने लगता है और बाद में हत्यारे चाचा के बारे में चतुराई से सब कुछ पता लगाकर अपने पिता की हत्या का बदला भी लेता है।

उपरोक्त घटना को पढ़ने के पश्चात ऐसा प्रतीत होता है की ग्रट्यूड और क्लॉडियस का यह कार्य है पूर्णतया घिनौना था लेकिन जब मैंने आलोचकों की रायों का अध्ययन किया तो ऐसा प्रतीत हुआ कि शेक्सपियर के समय में स्त्रियाँ बहुत शिक्षित नहीं हुआ करती थीं, इसलिए उन्हें जीविकोपार्जन के लिए पुरुषों पर निर्भर रहना पड़ता था। इसी कारण शायद ग्रट्यूड ने ऐसा किया था। राजकुमार हैलमेट भी उस समय पढ़ने के लिए जर्मनी गए हुए थे उन्हें तो तत्काल बुलाया गया था लेकिन दोनों के इतनी जल्दी विवाह करने से जनता शंकित हो उठी थी और राजकुमार हैमलेट का तो क्रोधित होना स्वाभाविक था ही।

मेरे मंतव्यानुसार 'संघर्ष का नाम ही स्त्री है' अथवा कह सकते हैं 'नारी तू संघर्ष है।' मैंने अपनी जीवन यात्रा में अनेकानेक ऐसी स्त्रियाँ देखी हैं जो स्वयं में मिसाल हैं। जिन्होंने शारीरिक, मानसिक, आर्थिक और भावनात्मक स्तर पर बलि देकर भी स्वयं को किसी के समक्ष कमजोर साबित नहीं किया। अपने करियर को भी अपनों के प्रति न्यौछावर कर दिया। नाम लिखना तो मर्यादा के खिलाफ होगा तथापि मैं एक्स, वाई, जेड नाम की ऐसी स्त्रियों से परिचित हूँ, जिन्होंने अपनी शिक्षा, लगन, मेहनत और आत्मसम्मान के बल पर जीवन में बहुत कुछ प्राप्त किया है और अभी भी कर रही हैं। वे दूसरों के हित में अपनी सभी इच्छाओं का दमन भी कर रही हैं। उनमें से एक-दो अविवाहित भी हैं, जो दूसरों के लिए मार्गदर्शन और प्रकाश पुँज का कार्य कर रही हैं। मैंने उन्हें कभी बहुत ज्यादा परेशान होते नहीं देखा, लेकिन यह अनुभूति अवश्य होती है कि कभी तो वे भी इस चीज को महसूस करती होंगी। लगता है इस कमी को वह अपने परिवार की खुशियों से पूरा कर लेती होंगी।

मेरे मतानुसार उनका जीवन शाँत समुद्र बन चुका है, जो समय समय पर भावनाओं की लहरों से प्रसन्नता, अप्रसन्नता का अनुभव करता है। संघर्ष के समय, भावनाओं के उफान को अंतर्मन में दफना कर अपने दायित्वों का पालन करना एक स्त्री की विशिष्ट पहचान है। इससे बड़ा कोई पारितोषिक उसके लिए नहीं होता। ऐसे दो या तीन उदाहरण मेरे हृदय पटल पर सदैव अंकित रहेंगे। अंत में मेरे अनुसार संघर्ष ईश्वर का आमंत्रण है, जो उसे स्वीकार करता है वही आगे बढ़ता है।

डॉ. अंजु दुबे
बुलंदशहर –उत्तर प्रदेश
मो. 9456071559

# सवाल पाठकीयता का

क्या आप पढते है? क्या पढ़ते है? क्यों पढ़ते हैं? पढ़ना हमारे दैनदिन क्रिया कलाप का महत्वपूर्ण अंग है और पढ़ना पुस्तकों से जुड़ा है। मध्ययुग में छापेखाने के विकास के साथ पुस्तकें अनेक ज्ञान विधाओं को अपने में संचित किए हुए लोगों की पहुँच में आती गई और सदियों तक ज्ञानार्जन और प्रसरण का माध्यम बनी रही। आज जब हम अपने आस-पास दृष्टि डालते है तो इसमें उल्लेखनीय ह्रास नजर आता है। पढ़ने का फोकस केवल स्कूली पढ़ाई तक रह गया है।

बचपन की गठरी में यादों के जो बेश कीमती मोती है उनमें पुस्तकों की भी आमद थी। भाषा और साहित्य की किताबें तो रात के अंधेरे में,

ढिबरी-लैम्प की रोशनी में भी पढ़ जाती थी। कविता-कहानी पढ़ने का जो आनन्द था, वैसा खेल में भी नहीं आने पाता था। जय प्रकाश भारती 'भैया जी' और कन्हैयालाल नंदन से तो जैसे घरेलू नाता था। 'नंदन' 'पराग' की कहानियाँ, कविताएँ, स्थायी स्तंभ, बाल समाचार सब एक साँस में पढ़ जाती थी। विश्व के कालजयी साहित्य के अंशों से 'नंदन' के माध्यम से ही परिचय हुआ। अखबार घर में बड़ों को जोर-जोर से पढ़कर सुनाना पड़ता था। विज्ञापन के प्रकार-ढ़ंग, सम्पादकीय पृष्ठ, पाठकों के पत्र सब पढ़े जाते थे। यहाँ तक कि कागज के लिफाफे जिनमें किराने का सामान आता था, वे भी खोल कर पढ़ लिए जाते थे। माँ की देखा-देखी खाना खाते-खाते भी पत्रिका पढ़ने की आदत पड़ गई। थोड़ा बड़े होने पर साप्ताहिक हिन्दुस्तान, धर्मयुग, मनोरमा, गृहशोभा, कादम्बिनी भी रीडिंग लिस्ट का हिस्सा बन गए। भूले बिसरे चित्र, चित्रलेखा, क्या भूलूँ, क्या याद करूँ, नीड़ का निर्माण फिर, अमृत और विष, गोदान, गवन, प्रेमाश्रम, शेखर एक जीवनी, झूठा सच, रसीदी टिकट, पिंजर, दीप जले शंख बजे ये सब स्कूली जीवन में ही आत्मसात कर ली गई थी।

किन्तु अब पढ़ना परीक्षा पास करने तक रह

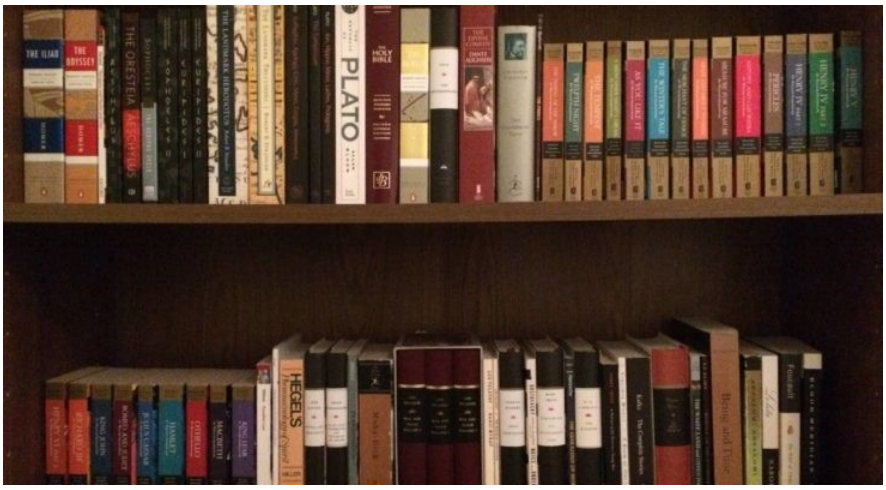


गया है। आज हर प्रकार का ज्ञान इण्टरनेट पर उपलब्ध है और उसी पर ढूँढा जाता है। पुस्तकें खरीदना पैसों की बर्बादी है। महाविद्यालय, विश्वविद्यालय जो उच्च शिक्षा संस्थान है, वहाँ विद्यार्थियों के बैग से पुस्तकें गायब हैं। पुस्तकें उपलब्ध कराना संस्थान की जिम्मेदारी है। पुस्तकालय में संदर्भ पुस्तकें नहीं पाठ्य पुस्तकें होनी चाहिए, जिससे शिक्षक की आवश्यकतानुसार कार्ड पर चढ़वाकर ली जा सकें और फिर दूसरे शिक्षक के कडाई करने पर पहले वाली वापिस करके उन्हें लें ले। फिर परीक्षा से पहले ही उन्हें वापिस भी कर दें। क्योंकि परीक्षा तो चित्रा, क्वांटम, शिवानी जैसे नोट्स से ही देनी है। पहले विद्यार्थी पूरे नोट्स खरीदते थे किन्तु अब माॅडल पेपर्स खरीदते हैं। पढ़ाई का शाॅर्टकट देखिए कि उन 20 प्रश्न वाले माॅडल पेपर्स में भी निशान लगवाने आ जाते है कि 'मोस्ट' लगा दीजिए। विश्वविद्यालय प्रकाशन जो पहले पाठ्य पुस्तकें छापता था। अब भूमिगत हो गया है।

साहित्य के विद्यार्थी बिना साहित्य पढ़े ही आगे बढ़ रहे हैं और समाज पर बोझ साबित हो रहे हैं। आधी अधूरी पढ़ाई शिकायत करने पर अधिकार छीन लेती है। हाँ ऐसे विद्यार्थी भी हैं जो पूरा पढ़ते हैं और जीवन में सफल होते है। शाॅर्टकट तभी अच्छे होते हैं जब आप लौन्ग कट्स में प्रवीण हो।

अब बात करते है खाली समय (समपेनतम जपउम) की। कि आप खाली, समय में क्या करते हैं? तो शायद 90ः से अधिक का उत्तर होगा मोबाइल चलाते हैं और मूड़ के अनुसार बेबसाइट का भ्रमण कर लेते है। हिन्दी क्षेत्रों में पढ़ने के शौक के बार में 2009 में नेशनल बुक ट्रस्ट ने एक सर्वेक्षण कराया जो बताता है पुस्तकों को पढ़ने का शौक कुल 7.5 प्रतिशत तथा अखबार पढ़ने का शौक 14.8 प्रतिशत हैं। अर्थात् कुल पढ़ने का शौक मात्र 22.3 प्रतिशत है। यह तस्वीर 13 वर्ष पहले की है। तब से मोबाइल संस्कृति और विशालकाय हो चुकी है। रही-सही कसर सस्ते या फिर मुफ्त डाटा ने कर दी। लोग 'वाट्ससएप' जैसी साइट्स से प्राप्त ज्ञान को मानक और अंतिम मान लेते हैं।

अतः बाजार से पुस्तकें-पत्रिकाएँ (पाठ्येतर) गायब हो रही है। पब्लिक लाइब्रेरी नहीं हैं, घरों में भी कोई पढ़ता नहीं जो देख कर छोटे पढ़े/पढ़ा भी जाता है तो ज्ञान नहीं वरन् सामान्य ज्ञान/साहित्य को छोड़कर सारा ज्ञान लिटरेचर है जो चिंतनीय है। हमंे पढ़ने वालों को कुछ पढ़ना बचाने के लिए कुछ सार्थक करना होगा।

डॉ रेखा चैधरी
खुर्जा—बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश
मो. 6398858305

# हिन्दी लोक गीतों में राष्ट्रीय चेतना के स्वर

भारतीय मनीषियों का चिन्तन सूक्ष्म और विचार उदात्त थे, उन्होंने वसुधैव कुटुम्बकम् मंत्र के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीयता का सूत्रपात किया था। उपनिषद काल के क्रान्तिकारी अमर संदेश को नहीं भुलाया जा सकता। यथा-'उत्तिष्ठित जागृत प्राप्त वरान्निबोधत' उठो जागो, श्रेष्ठ पुरूषों के पास जाकर राष्ट्र प्रेम के तत्व को भली-भाॅति समझो। राष्ट्रीय चेतना के स्रोत वैदिक साहित्य से ही विद्यमान रहे हैं। भूमि, जन और जन की संस्कृति के प्रति प्रेम भाव राष्ट्रीय प्रवृत्ति ही है। भूमि के प्रति प्रेम भाव की प्रथम अभिव्यक्ति वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है।

हिन्दी कविताओं में राष्ट्रीय चेतना का जो रूप दिखायी देता है उसकी परम्परा संस्कृत साहित्य से होती हुई आयी है। हिन्दी साहित्य के उद्भवकाल में केन्द्रीय सत्ता के अभाव के कारण इस युग के सम्पूर्ण काव्य में राष्ट्रीय भावना के स्वस्थ रूप का अभाव मिलता है। किन्तु भक्त कवियों के अन्तः करण में बहती राष्ट्रीय चेतना धारा ने निराश्रित समाज को नई दिशा दी। महात्मा कबीर ने राम रहीम को एक सूत्र में पिरोने का प्रयास किया। कबीर अपने युग के महान राष्ट्रवादी साहित्यकार थे। बाबा तुलसीदास ने समन्वयवादी, लोकरक्षक और लोकरंजक स्वरूप को स्थापित कर सांस्कृतिक एकता को शक्ति प्रदान किया। सूर ने कर्म योगी कृष्ण की विविध लीलाओं के माध्यम से समाज को सत्कर्म हेतु प्रेरित किया। रीति काल में भूषण के राष्ट्रवादी स्वर ने लोक चेतना को झकझोर दिया। छायावादी कवियों का राष्ट्र प्रेम भावात्मक एवं व्यापक था। दिनकर ने जन जागरण तथा अभियान गीतों से राष्ट्र की आत्मा को नई चेतना प्रदान की।

एक तरफ जहां शिष्ट साहित्य के व्यापक फलक ने राष्ट्र चेतना के उन्नयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी वहीं दूसरी ओर साधारण जन-मानस के साहित्य ने अति साधारण जनता के हृदय में राष्ट्र चेतना का बिगुल बजाने का अनोखा कार्य किया। हिन्दी

की विभिन्न बोलियों में राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत, स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े अनेक लोक गीतों की रचना हुई। उन गीतों ने ऐसे साधारण समाज को आंदोलित किया जिन तक संभ्रान्त समाज का साहित्य नहीं पहुॅच पाया था। ऐसे लोक साहित्यकारों ने लोक जीवन परम्परा तथा राष्ट्रीय चेतना को वाणी दी। इस सन्दर्भ में बाबू कुंवर सिंह और उनके भाई अमर सिंह तथा 1857 की क्रान्ति में भाग लेने वाले अनेक वीरों के सम्बन्ध में भोजपुरी भाषी जनता में अनेक लोकगीत प्रचलित हैं। बिहार प्रान्त में हर वर्ष होली के अवसर पर फाग लोक गीत गाते हुऐ बाबू कुंवर सिंह की शौर्य गाथा अवश्य दुहराई जाती है-

बाबू कुंवर सिंह तोहरे राजे बिनु
अब न रंगईबो केसरिया
इतते अईले घेरि फिंरगी
उतते कुंवर दोउ भईया।

बुन्देलखण्ड के लोक गीतकारों ने रानी लक्ष्मीबाई तथा अन्य क्रान्ति वीरों की बहादुरी, देशभक्ति तथा बलिदान की प्रशस्ति में अनेक

लोकगीतों की रचना की है। 'झांसी की रानी' कविता जिसने कवयित्री सुभद्रा कुमारी चैहान को साहित्यिक अमरत्व दिया उस कविता का बीज सुभद्रा जी को हर बोले लोक गीतकारों द्वारा प्राप्त हुआ था जो घर-घर घूम-घूम कर शौर्यगाथा कुछ इस प्रकार गाते थे -

खुबई लड़ी मरदानी
अरे झांसी वाली रानी थी
बुरजन-बुरजन तोपे लगा दई
गोला चलावे असमानी
अरे झांसी वाली रानी थी।

बुन्देलखण्ड की प्रसिद्ध गीत विधा आल्हा जो कई सदियों से बुन्देलखण्ड की संस्कृति की पहचान रही है। 1250 के आस-पास रचित जगनिक का आल्हखण्ड आज राष्ट्रीय भावना के उद्गार का शसक्त माध्यम बन गया है। आल्हखण्ड की तर्ज पर अनेकानेक गीत गाये जाते हैं यथा -

वीर सहीदों की कुरबानी
देना ना तुम कभी भुलाये
गहरी नींद में वीर जो सो गये
मातृ भूमि की गोद समाये।

कौरवी लोक गीतों में क्रान्ति और राष्ट्रीय चेतना का स्वर बड़ा ही मुखर है अपने क्रान्तिकारी पति से देश सेवा के लिये आग्रह करती हुई पत्नी कहती है -

पीतम चलूं तुम्हारे संग
जंग में पकड़ूंगी तलवार
गोला बारूद से नहीं डरूंगी
बिना मौत के नहीं मरूंगी।

आज भी फीजी और मारीशस में अनेक विदेशिया लोक गीता गाये जाते हैं जो भारतीय गिरमिटया मजदूरों की यातना प्रवास की पीड़ा और देशभक्ति की भावना को व्यक्त करता है। उनके गीतों में अपनी मिट्टी से उजड़ने की पीड़ा स्पष्ट देखी जा सकती है -

फिरंगिया के रजुआ मां छूटल मोरा देसवा
की गोरी सरकार चली चाल रे विदेसिया
सोनवा के खातिर हम अइली मिरिच देसवा
कि गलि गईले सोनवा से सरीर रे विदेसिया।

क्रान्तिकारी विचारों, भावनाओं व राष्ट्रीय प्रेम की जैसी सहज अभिव्यक्ति लोक साहित्य में मिलती है वैसी अन्यत्र नहीं दिखायी पड़ती। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लोक रचनाकारों ने आम जनता से निकले उन हजारों शहीद देशभक्तों की कीर्ति की रक्षा की है। जिन्हें इतिहास या परम्परागत साहित्यिक कृतियों में स्थान नहीं मिल पाया है। निःसन्देह हमारा लोक साहित्य राष्ट्रीय एवं क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों को प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त करता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. लोकगीतों के संदर्भ और आयाम - डॉ शान्ति जैन
2. कौरवी लोक साहित्य - डॉ नवीन चन्द लोहनी
3. संस्कारों के संवाहक, लोकगीत - कृष्ण कुमारी आर्या
4. अवधी लोकगीत एक अन्तर्यात्रा - कमल नयन पाण्डेय
5. भोजपुरी लोकगीत - डॉ कृष्णदेव उपाध्याय
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ नगेन्द्र

**डा. बीना माथुर**
खुर्जा, बुलंदशहर, उ. प्र.
मो. 9997158408

# मुगल काल में हिंदी

अध्ययन की दृष्टि से हिंदी भाषा के विकास को तीन भागों मे विभाजित किया गया है - आदिकाल, मध्यकाल, और आधुनिक काल। आदिकाल मे हिंदी भाषा के तीन रूप दिखाई पड़ते है - अपभ्रंशाभास, पिंगल , डिंगल। 1206 ई. मे मुस्लिम आक्रंताओं ने भारत पर अधिकार कर दिल्ली सल्तनत की स्थापना की। उत्तर भारत मे इस्लामिक शासन की स्थापना के बाद यहाँ के मूल निवासियों की सामाजिक और साहित्यिक प्रगति मंद हो गई। राजदरबार की भाषा फारसी थी इसीलिए क्षेत्रिय भाषाओं को राजकीय प्रश्रय प्राप्त नही हुआ। विद्वानों ने 1375 वि.सं. से 1700 वि.सं. को भक्ति काल माना है। जार्ज ग्रियर्सन ने इस काल को हिंदी साहित्य का स्वर्ण काल कहा है किन्तु वह कहते है कि कोई भी भक्तिकाल के प्रादुर्भाव का काल निश्चित नहीं कर सकता।1 इस युग तक हिंदी की तीन स्पष्ट बोलियां विकसित हो गई थी ब्रज भाषा ,अवधि और खड़ी बोली। खड़ी बोली पर अवधी या ब्रजभाषा का प्रभाव दिखाई नही देता है। खड़ी बोली मे संस्कृत के शब्दों की बहुलता करके ही हिंदी भाषा का उद्भव हुआ प्रतीत होता है। डा. सुनीति कुमार चटर्जी खड़ी बोली के साहित्यिक रूप को नागरी हिंदी कहते है। कृष्ण मार्गी कवियों ने हिंदी की ब्रजभाषा को गोर्वांवित किया। अमीर खुसरो ने इसी समय फारसी-हिंदी शब्दकोष की रचना की।2 खुसरो की लोकोक्तियां, पहेलियां, मुकरियां वर्तमान मे भी अत्यंत प्रसिध्द है। सल्तनत काल के कवियों मे नामदेव, रामानन्द, गुरूनानक, कबीर, आदि के नाम प्रमुखता से लिए जाते है।इन कवियों की भाषा मिश्रित है किन्तु इनका अध्ययन हिन्दी साहित्य मे ही किया जाता है।3

1526 ई. मे मुगल बादशाह बाबर ने पानीपत के मैदान मे दिल्ली के शासक इब्राहिम लोधी को परास्त कर भारत मे मुगल साम्राज्य की नींव रखी। यही से हिंदी की प्रगति का युग आरंभ होता है। मुगलों की मातृ भाषा तुर्की थी। उनकी दरबारी भाषा फारसी और अरबी थी। फिर भी मुगल बादशाहों ने हिंदी मे कविताएँ लिखी। जिन बादशाहों ने नहीं लिखा वे भी हिंदी को पूरा सम्मान देते थे। चंद्रबली पांडे बाबर के दरबार मे सुनाये गये दोहे का जिक्र करते है -

> नौ सौ ऊपर था बतीसा,पानीपत मे भारत दीसा।
> अठई रज्जब सुक्करवारा, बाबर जीता वराहीम हारा।

मुगलकाल मे वास्तुकला, संगीतकला, शिल्पकला, चित्रकला, नृत्यकला,आदि कला की सभी विधाओं के साथ फारसी ,उर्दू, तथा हिंदी आदि भाषाओं के साहित्य का भी विकास हुआ।4 बाबर कला, और प्रकृति प्रेमी था। बाबर की आत्मकथा बाबरनामा मे कुछ रूबाइयाँ मिलती है।5 हरवंश मुखिया के अनुसार अगर बाबर भारत न आता तो भारतीय संस्कृति के इन्द्रधनुश के रंग फीके रहते ।

चंद्रबली पाण्डे लिखते है कि हुमायूँ के दरबार मे फारसी भाषा के कुछ ऐसे कवि थे जो

हिंदी मे भी गीतों की रचना करते थे। वे कवि अब्दुल वाहिद बिलग्रामी और शेख गदाई देहलवी थे। उसके दरबार मे क्षेम नामक हिंदी का कवि भी था।

अकबर के शासन को हिंदी के उत्थान का स्वर्ण-युग कहा जा सकता है। राहुल सांकृत्यायन के अनुसार –अशोक के बाद देश मे दूसरा ध्रुवतारा अकबर ही दिखाई पड़ता है। अकबर प्रथम मुगल शासक था जिसने मुसलमानों के साथ हिंदुओं को भी भाषा और अभिव्यक्ति की स्तंत्रता प्रदान की थी। के. टी. शाह कहते है कि अकबर ने हिंदू और मुसलमान दोनों जातियों को राष्ट्रीयता के सूत्र मे पिरोया।7 इस काल मे हिंदी की अवधी भाषा का ठेठ ग्रामीण रूप तथा तत्सममुखी रूप दिखाई देता है। मलिक मुहम्मद जायसी ने 1540 ई. के लगभग अपनी प्रसिध्द पुस्तक पद्मावत लिखी जिसमे एक रूपक के रूप मे मेवाड़ की रानी पद्मिनी की ऐतिहासिक कहानी है। इसमे हिंदी की अवधी बोली का ठेठ ग्रामीण रूप दिखाई पड़ता है। इस काल मे उच्च कोटि के रचनाकारों मे तुलसीदास, सूरदास, अब्दुर्रहीम खानखाना, रसखान, आदि प्रमुख थे। तुलसीदास ने रामचरित मानस की रचना वैसवाड़ी अवधी मे की (अवधी का तत्सममुखी रूप)।

राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुध्दि निधान।
आसिष देई गई सो हरषि चलेऊ हनुमान ।।

तुलसीदास ने अवधी भाषा को साहित्यिक ऊँचाई पर पहुँचा दिया।तुलसीदास की अन्य रचनाओं मे-विनयपत्रिका ,कवितावली, जानकी मंगल, दोहावली, पार्वती मंगल, गीतावली, वरवै रामायण आदि है। सूरदास की रचनाओं मे-सूरसागर, सूरसारावली, साहित्य लहरी, नल-दमयन्ती, ब्याहलो आदि प्रमुख है।श्री कृष्णजी के अनन्य उपासक तथा ब्रजभाषा के श्रेष्ट कवि महात्मा सूरदास हिंदी साहित्य के सूर्य माने जाते है।8 बालक की चपलता,स्पर्धा, अभिलाषा, आकांक्षा का वर्णन करते हुए सूरदास लिखते है-

मैया कबहिं बढ़ैगी चौटी ,
किती बार मोहिं दूध पियत भई,

यह अजहूँ है छोटी।

रसखान की रचनाओं मे श्रृंगार और भक्ति की प्रधानता के कारण ही उन्हे रस की खान कहा गया है। उनकी प्रमुख रचनाओं मे सुजान रसखान, और प्रेमवाटिका है। सुजान रसखान, कवित्त और सवैया छन्दों से युक्त है –मानुस हौं तो वही रसखान बसौं मिलि गोकुल गाँव के ग्वारन

प्रेमवाटिका मे उन्होने दोहा छन्द का प्रयोग किया गया है। इन्होने परंपरागत पद्य शैली का परित्याग कर मुक्तक छन्द शैली को अपनाया है जो रीतिकाल तक दिखाई देती है। रहीम तलवार और कलम दोनो विध्याओं मे पारंगत थे। अकबर के समय मे प्रधान सेनानायक और मंत्री थे और अनेक बड़े बड़े युध्दो मे भेजे गए थे।9 रहीम ने अपनी रचनाओं मे अवधी, ब्रज और खड़ी बोली का प्रयोग किया है। रहीम ने बरवै अवधी मे लिखे , दोहे सोरठे तथा कवित्त सवैये ब्रजभाषा, में लिखे तथा मदनास्टक मे खड़ी बोली का प्रयोग किया है-

कलित ललित माला या जवाहिर जड़ा था।
चपल चखन वाला चाँदनी मे खड़ा था।।

उसने रहीम सतसई, श्रृंगार सतसई, रहीम रत्नावली, बरवै नायिका भेद आदि ग्रंथ लिखे। अकबर के दरबारी कवियों मे बीरबल, भगवानदास, मानसिंह, टोडरमल, आदि सभी सेनानायक होने के साथ साथ अच्छे कवि भी थे। बीरबल बादशाह का दरबारी कवि था जिसे अकबर ने कविराज की उपाधि से विभुषित किया था। अकबर स्वयं भी कविताएं किया करता था।हिंदी मे भी उसने बहुरंगी अनोखे ढंग की कविताएं लिखीं है जो काव्यकला का बेजोड़ उदाहरण है।10 जहाँगीर के शासन मे रीति –ग्रंथों का निर्माण कार्य आरंभ हुआ तथा द्वन्द,शब्दशक्ति, अलंकार, रस, आदि विषयों पर अनेक कवियों ने ग्रंथों की रचना की। उसके दरबार मे केशवदास,

मतिराम, चिंतामणी, देव, पद्माकर,महाराजा जसवंतसिंह आदि विद्वानों ने हिंदी ग्रंथों की रचना की। केशवदास ने कविप्रिया, रामचन्द्रिका,रसिकप्रिया विज्ञान गीता, जहाँगीर जसचंद्रिका आदि ग्रंथों की रचना करके हिंदी के उत्थान मे योगदान किया। शाहजहाँ के शासन काल मे ग्वालियर के सुन्दर नामक कवि को शाहजहाँ ने राजकवि तथा महाकवि की उपाधि से विभूषित किया था। रीति के ऊपर उसने सुन्दर सागर नामक ग्रंथ लिखा। इसी काल मे सेनापति ने काव्य कल्पद्रुम, कवित रतनाकर तथा बिहारी ने बिहारी सतसई की रचना की ।

1658 ई. मे औरंगजेब मुगल बादशाह बना। उसकी हिंदू विरोधी नीति ने हिंदी और हिंदी साहित्य को बहुत क्षति पहुँचाई। कुछ प्रादेशिक राजाओं ने हिंदी को आश्रय प्रदान किया। इस काल मे भूषण, मतिराम हिंदी के श्रेष्ठ कवि हुए। भूषण छत्रपति शिवाजी के मित्र और दरबारी कवि थे। भूषण की रचना वीर रस पर आधारित हैं जबकि मतिराम ने अलंकार पर आधारित ग्रंथों की रचना की। मोहता नैणसी के ख्यात, खुमान रासो, राणा रासो आदि इसी काल मे लिखे गए।

अत: हम कह सकते है कि मुगल काल मे वास्तुकला, मूर्तिकला, संगीतकला, नृत्यकला, चित्रकला आदि पर हिंदवी और मुस्लिम दोनो कला शैलियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इसी प्रकार फारसी और संस्कृत भाषाओं के सम्मिश्रण से एक तीसरी जनभाषा हिंदी उत्पन्न हो गई। खड़ी बोली मे संस्कृत भाषा के शब्दों के अधिक प्रयोग ने हिंदी को जन्म दिया तथा खड़ी बोली मे फारसी भाषा के शब्दों की अधिकता ने उर्दू को जन्म दिया। मुगलकालीन भारतीय समाज मे दो प्रकार का चरित्र विद्यमान था- प्रथम बादशाह, दरबारी और सामंतों का भोगविलास युक्त चरित्र तथा दूसरा जन-साधारण का उच्च नैतिक गुणों से युक्त चरित्र। इसीलिए इस काल मे हिंदी के क्षेत्र मे दो प्रकार का साहित्य स्पष्टत: दृष्टिगोचर होता है। भक्तिकालीन साहित्य इसका आधार अपने अराध्य देव को प्राप्त करने के लिये प्रेम, भक्ति और नैतिक आदर्शों के मार्ग पर चलना है तथा रीतिकालीन साहित्य अलंकारों, रसों, नायिका भेदों, शब्द शक्तियों, ध्वनि भेदों को आधार बनाकर लिखा गया। मुगलकाल मे नागरी हिंदी अंकुरित,पल्लवित और पुष्पित हुई।

संदर्भ


1. डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी – हिंदी साहित्य की भूमिका ,पृ.सं.38
2. डा. ए. के.मित्तल – मध्यकालीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास , साहित्य भवन
3. पब्लिकेशन, पृ.सं.142
4. वही
5. एल. पी. शर्मा – मध्यकालीन भारत ,लक्ष्मीनारायण अग्रवाल पुस्तक प्रकाशन एवं विक्रेता पृ.सं.4
6. बाबरनामा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद,युगजीत नवलपुरी साहित्य अकादमी नवीन शाहदरा दिल्ली पृ.सं.419
7. चंद्रबली पाण्डे – मुगल बादशाहों की हिंदी कविता,नागरी प्रचारणी सभा ,काशी पृ.सं. 61
8. के. टी. शाह – द स्पलेंडर देट वाज इंडिया, केसिंगर पब्लिशिंग कंपनी ,पृ.सं.30
9. आचार्य रामचंद्र शुक्ल – हिंदी साहित्य का इतिहास ,नागरी प्रचारिणी सभा ,काशी पृ.सं.159
10. वही पृ.सं. 119
11. शीरी मूसवी (सम्पादक) – अकबर के जीवन की कुछ घटनाएं,नेशनल बुक ट्रस्ट पृ.सं.92

रजनी सिंह
डिबाई-203393-उ.प्र.
मोबाइल 9412653980

# कितना सत्य कितना झूठ

वर्तमान समय में प्रत्येक व्यक्ति, चाहे शहरी है या ग्रामीण, अमीर है या गरीब, शिक्षित या अशिक्षित अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है। भौतिकतावादी युग में बढ़ती इच्छाएँ, एक दूसरे से स्पर्धा और बढ़ती आबादी कुछ ऐसे पहलू हैं जिन्हें सुलझाना कठिन है। संयुक्त परिवार हो या एकल बुजुर्गों के प्रति अविश्वास, समाज बच्चों की परवरिश, नौकरी में आने वाले विघ्न ऐसे प्रश्न हैं जिनके उत्तर देने के लिए हमें जद्दोजहद करनी होती है। कई बार हम परेशान इन उलझनों से राहत पाने के लिए किसी ऐसे व्यक्ति को ढूँढते हैं जो प्यार भरे बोलों से हमें ऐसा सरल हल बता दे। ऐसे में कोई हमें किसी साधू या संत का नाम बताता है और अपने साथ हुए चमत्कारों का लम्बा विवरण देता है तो हम कुछ भी करने को तैयार हो जाते हो। कहावत है 'दुखी मनुष्य क्या कुकर्म नहीं करता।'

एक बार ऐसी ही कुछ समस्याओं से परेशान होकर एक मित्र की सलाह पर हम भी किसी साधु के पास पहुँच गए। उनके पास देखी अपार भीड़ तो सोचा भई इतने सारे लोग तो बेबकूफ नहीं होगें। कुछ न कुछ तो ईश्वरीय कृपा है इन पर, अतः

लाइन में लगे। काफी देर में नंबर आया, मित्र ने बताया कि इनकी कृपा से सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं। ये पहुँचे हुए सिद्ध पुरूष हैं।

साधु बाबा का गौर वर्ण, माथे पर लम्बा टीका, श्वेत वस्त्र आदि देखकर ऐसा सम्मोहन हुआ कि एक-एक कर सारी समस्याएँ कह डाली। बाबा समझ गए बच्चा ज्यादा परेशानी में है। उन्होंने कुछ ईश्वरीय शक्ति से जुड़े, कुछ धन व्यय और कुछ विस्मय भरे, कुछ अदृश्य शक्तियों के प्रभाव से समस्या समाधान के उपाय बताए जिसके लिए हमें अच्छी खासी रकम देनी पड़ी। बाबा के कई भक्तों ने उनके सफल कार्यों की झड़ी लगा दी। दिल और दिमाग उनका हो गया। वापिस लौट कर घर आए तो सब कुछ बदला लगा।

वास्तव में मनुष्य परेशानी में ऐसे उपाय खोजता है और उपाय हो जाने पर वह अपने व्यवहार में बदलाव से स्थिति को सुधार लेता है किंतु उसे उस उपाय का परिणाम समझने की भूल करता रहता है। बाबा के पास बार बार जाने पर फंस जाते हैं। हमारा भी खूब समय और धन का अपव्यय हुआ लेकिन पता लगा कि यह परेशानियाँ तो वास्तव में हमारे प्रयत्नों से हो सुलझी हैं। समाज में सच्चे साधु संत मिलना मुश्किल है। यह सत्य है कि शाँति के लिए हम अनेक रास्ते ढूंढते हैं, परंतु सच्ची शाँति हम स्वयं में और अपने परिजनों में ही ढूँढ पाते हैं। बाकी सब भ्रम ही है। यह भी शाश्वत सत्य है कि जिन साधुओं को हम भगवान के दूत समझते हैं उन्हें धनवानों की भीड़ आकर्षित करती है। गाँधी जी कहते थे कि भीड़ के साथ मत चलो वरन पाँच सेर नमक खा मित्र बनाओ। इस पर

चिंतन करने से समझ में आता है कि खूब सोच समझ कर और पहचान कर किसी पर विश्वास करना चाहिए। नकली वेश में मृग और रावण दोनों के द्वारा राम और सीता धोखा खा गये, मनुष्य की तो बात ही क्या है? भाग्यशाली हैं वे जिन्हें सच्चे संत की संगत मिल जाए। आजकल समाचार पत्रों, टी.वी,और सोशल मीडिया पर ढ़ोगी बाबाओं के रैकेट चलाने की वारदातें आम रूप से देखी- सुनी जाती हैं। साधु को मर्सिडीज कार का अर्थ विलासिता है। भेड़ चाल और अंधी दौड़ से बचें वरना ठगे जायेंगे।

प्राचीनकाल में साधु संत अर्थ और काम से विमुख होता था और धर्म की रक्षा या मोक्ष की कामना से तपस्वी बनता था। वह धनार्जन भी करता तो मानवहितार्थ। आजकल साधू जनहित की आड़ में अपराधों का अडडा बना भोग विलास में लिप्त रहते हैं। राजनीतिज्ञों से संबंध बनाकर वे अपराध करते रहते हैं और नेताओं को उनके द्वारा भक्तों के वोट मिलते हैं। हमें इस गठजोड़ को समझना होगा। ऐसे संतों की संगत नशे में अपने दुख भूलने की कोशिश जैसी होती है। उनका साथ भटकन और उलझन दोनों से भरा है। जवान बच्चों को जादू टोने या साधू संगति से दूर रखें, वे अनुभवहीनता के कारण फंस जाते हैं। व्यक्ति को सच्ची ईश्वर भक्ति और स्वयं पर विश्वास होना चाहिए। मनुष्य लालच में सदैव ठगा जाता है। धन कमाने के लिए सार्थक और सकारात्मक कर्म ही एकमात्र उपाय है। अंत में मैं बिषय की नैतिकता को शत प्रतिशत अपने विवेक की तुला पर तोलते हुए कहना चाहुँगी कि दुनिया में अच्छे और बुरे दोनों किस्म के साधु-संत होते है जरूरत है कि हम आँखें खोल कर उनके भक्त बनें।

अवधेश सिंह
वैशाली, गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश
मो. 9868228699

# हिन्दी के हवलदार

जब हम आजादी के अमृत महोत्सव को ज़ोर शोर से मना रहें हैं तब हमें अँग्रेजों की अँग्रेजी से आजादी की महत्वपूर्ण बात याद ही नहीं है । धार्मिक उत्सवों में हम सभी प्रकार से सनातन धर्म के विकास एवं प्रचार को लेकर संजीदा हैं लेकिन हम इसको आगे बढ़ाने के लिए एक मात्र संपर्क की भाषा हिन्दी के योगदान और महत्व को नजर अंदाज किए बैठे हैं । जैसे बेरोजगारी, महंगाई, और गंगा-जमुनी संस्कृति को हम भुलाए बैठे हैं वही हालत देश में सबसे ज्यादा बोली और समझी जाने वाली भाषा हिन्दी की भी है। हिन्दी की तुलसी माला सभी हिन्दी के तथा-कथित हितैषियों के हाथ है और वे इसे लगातार फेरते भी रहते हैं। लेकिन क्या मजाल की हिन्दी की दशा और दिशा को तय करने के मामले में कभी गंभीरता का परिचय किसी व्यक्ति या संस्थान ने दिया हो। लोकतन्त्र, राष्ट्र भाव, देशभक्ति की रस्म अदायगी में हिन्दी पर आ गईं चुनौतियों पर शायद ही कोई गंभीर हो।

मुझे याद पड़ता है कि 70-80 के दशक में मुझे हिन्दी के पीरियड में बंक मारने में कितना आनंद आता था। "सतगुरु सगा न को सखा" को समर्पित हिन्दी की कक्षा में आचार्य जी क्या और क्यों पढ़ा रहें है न इसपर वे चर्चा करते थे और न ही हम विद्यार्थी जन की इसमें रूचि होती थी। यह विषय आउट आफ फैशन था। हम समझते थे कि साइंस और कामर्स ही जीवन की नैया है बाकी सभी विषय कॅरियर डुबाऊ। मसलन हिन्दी को एक उबाऊ विषय के रूप में हमारे मनोमस्तिष्क में बैठा दिया गया था। जिसे बिना पढ़े भी परीक्षा में पास हुआ जा सकता था। काश अंगेजी की गुलामी की जंजीरों के तोड़ने के लिए हिन्दी भाषी राज्यों में ही हिन्दी कक्षाओं में उपस्थिति और परीक्षा के प्रतिशत का उच्चतम निर्धारण किया जाता और उसे अन्य सभी विषयों का गेटवे बना दिया जाता तो तस्वीर कुछ और होती। फिर तकनीकी विषयों के हिन्दी अनुवाद भी सुलभ होते और अँग्रेजी पर निर्भरता खत्म होती। दरअसल हिन्दी को रसातल में ले जाने कि शुरुआत तभी हुई जब कि अंगेजी को सभी तकनीकी विषयों के लिए आवश्यकता से अधिक प्रतिष्ठापित किया गया। अँग्रेजी को हमारे गले में टाई की तरह लटका दिया गया है। चाहे न चाहे हम इसे बाधने के लिए बाध्य हैं।

भारतीय संविधान के मुताबिक हिन्दी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त है । हिन्दी क्षेत्रों में इसमें सरकारी काम काज हो और अहिंदी क्षेत्रों में इसके विस्तार की ज़िम्मेदारी गृहमंत्रालय के अधीन राजभाषा विभाग को दी गयी है। इसके कार्यक्षेत्र में आज भी हिन्दी के विकास की योजनाएँ बनती बिगड़ती रहती हैं जबकि देश की स्वतन्त्रता की 75 वीं वर्षगांठ हमने अभी मनाई है। कौतूहल का विषय है कि हिन्दी अधिकारी को इसके लिए संगठन के कार्मिक या स्थापना अधिकारी के दिशा निर्देशों के अंतर्गत हो रही खानापूर्ति में उसके साथ सहयोग करना पड़ता है।

प्रत्येक वर्ष सितंबर माह में मंत्रालयों सहित सभी सरकारी विभागों में होने वाले हिन्दी पखवाड़े इन कार्यवाहियों के उदाहरण के तौर पर लिए जा सकते हैं। हिन्दी निबंध, हिन्दी सुलेख, हिन्दी टिप्पणी आदि की प्रतियोगिताओं के

आयोजन और बाद में काव्य-पाठ, जिसमें न तो मौलिकता को देखा जाता है और न गुणवत्ता को। उद्देश्य है कि विभाग का एक क्रियाकलाप पूरा हो ताकि राज भाषा विभाग को कागजी रिपोर्ट कोरी न भेजी जाए।

हिन्दी के संस्थान और हिन्दी सेवी संगठन स्लोगन और गोष्ठी – कार्यशाला संस्कृति के वे पुरोधा हैं जहाँ उनके प्रवेश बिन्दु से उनके कार्यालय और परिसर में तस्वीरों में हिन्दी के उन महान साहित्यकारों को सुशोभित कर रक्खा है जो जीवन भर विपन्नता और गरीबी के संघर्ष के साथ हिन्दी की एकल सेवा में चुक गए और जिन्होंने हिन्दी को मरते दम तक समृद्ध किया। इन संस्थानो की नियुक्तियों से लेकर इनके द्वारा हो रहे प्रकाशन में भी राजनीतिक इच्छा और प्रभाव इस कदर है कि इनसे हिन्दी के विकास की अपेक्षा रखना ही बेमानी है।

मेरा 1984 से अब तक हिन्दी के कंप्यूटरीकरण से सीधा नाता रहा है। चूंकि व्यक्तिगत तौर पर में इस अनुभाग का अधिकारी रहा हूँ और हिन्दी भाषा का कंप्यूटर पर टंकण को काफी नजदीक से देखा है, किया है और इसकी ट्रेनिंग भी दी है। तकनीक रूप से कंप्यूटर द्वारा लेखन विधि में हिन्दी के प्रसार के लिए सी-डेक ने 1994 में जिन प्रयासों को सरकारी दिशा निर्देश में किया उस समय तक हिन्दी भाषा और लिपि देवनागरी के प्रति एक रुझान दिख रहा था। 1998 में तभी विंडो बेस्ड कंप्यूटर का दौर आया और हिन्दी के इमेज वाले फॉन्ट का चलन हुआ जहाँ कंप्यूटर की-बोर्ड पर पारंपरिक हिन्दी टाइप मशीन से मिलते हुए कीज को प्रयोग में लिया जाने लगा। यह हिन्दी कि दिशा को तय करने का महत्वपूर्ण दौर था। दरअसल इस दौर में कंप्यूटर की तकनीकी से बेखबर हिन्दी के मठाधीशों ने इस पर कोई भी दूरदर्शिता नहीं दिखाई। यह वह समय था जब सी-डेक अपनी 1994 की तकनीकी को कूड़े में फेक कर अपने अस्तित्व को बचाने के लिए छटपटा रहा था उसे शायद विंडो फॉन्ट के अगले कदम का अंदाज हो गया था।

देवनागरी लिपि का महत्व बिल्कुल वैसा है जैसे मानव शरीर की संरचना में उसके अंगों का होता है। हिन्दी का अस्तित्व ही देवनागरी है क्योंकि लिपि के बिना भाषा का आधार ही क्या? एक बड़ी चूक 2010 में इन हिन्दी के तथाकथित हवलदारों से हुई। गूगल ने यूनिकोड विकसित किया जिसमें हिन्दी समेत विश्व की तमाम भाषाओं को वर्चुअल की-बोर्ड की मदद से रोमेन लिपि से परिवर्तनीय कर डाला। मसलन आप अपने बोलचाल के उच्चारण को की-बोर्ड पर यूनिकोड एक्टिव करने पर टाइप करते है तो स्क्रीन पर आपको अपनी भाषा लिखी दिखाई पड़ती है।

ग्लोबल व्यापार भारत को हमेशा बड़ा और सहज बाजार समझता है क्योंकि राजनीतिक दलों को अपनी महत्वाकांक्षाओं के आगे देश हित की कोई चिंता नहीं होती। भारतीय बाज़ारों में हिन्दी को जाने बिना नहीं घुसा जा सकता है और हिन्दी के विज्ञापन और प्रचार तंत्र को हिन्दी के जानकारों की आवश्यकता होगी। हिन्दी में नौकरियाँ का इजाफा होगा और हिन्दी भाषा की समृद्धता से भारत में एकता का भावनात्मक सूत्रपात होगा।

तकनीकी की इस दौड़ में हिन्दी का महत्व विदेशी व्यापारियों ने जितना अधिक समझा उसका यदि एक प्रतिशत भी देश ने समझा होता तो दिशा और दशा कुछ और होती। माइक्रोसॉफ्ट

ने विंडो 2007 कि सिरीज में हिन्दी इंडिक लेंगवेज़ को ही पेश कर दिया। फेसबुक, ट्विटर,इंसटाग्राम, वाहटसेप आदि न्यू मीडिया में आज धड़ल्ले से अंग्रेजी रोमेन से यूनिकोड हिन्दी का प्रचलन चल रहा है।

कोई भी व्यक्ति बिना देवनागरी लिपि के ज्ञान के हिन्दी का लेखन बड़ी सरलता से कर सकता है और इनके फॉन्ट इमेज को सर्च इंजिन पकड़ कर आपकी वांछित सूचनाएँ आपके स्क्रीन पर दे रहे हैं और इन सब के एवज में ये सारी न्यू मीडिया की कंपनियाँ अपनी शर्तों पर व्यापारिक और बाजार में अपने उत्पाद को लेकर खड़ी कंपनियों से करोड़ो रुपए कमा रहीं हैं वो भी अपनी शर्तों पर बिना भारत सरकार के प्रतिबंध को माने। दरअसल इसके पीछे भी भारत के आईटी मंत्रालय कि हीला- हवाली है। यह गौर तलब है कि चाइना और जर्मनी आदि देश ने गूगल पर अपने देश में बैन लगा दिया है जबकि भारतीय प्रधानमंत्री इसे गूगल बाबा कह कर सम्मानित करते नहीं अघाते।

हिन्दी लिपि के ज्ञान से अनभिज्ञ भारत, हिन्दी साहित्य के मर्म से जुदा भारत और हिन्दी की दुहाई देकर राष्ट्रीय एकता को एक सूत्र में बाधने वाले हिंदुस्तान की अवधारणा इस तकनीकी संजाल में दम तोड़ देगी। सब कुछ पूरी तरह विदेशी चुंगल में है। इस साजिश पर यदि तत्काल ध्यान न दिया गया तो न हिन्दी रहेगी और न हिन्दी के हवलदार।

योगेंद्र पाल सिंह
खुर्जा-उत्तर प्रदेश
मो.8439383597

# बंधन मुक्त

कई बार विचार आता है कि विश्व के छोटे से आँगन में खेलते हुए मनुष्य महत्वाकाँक्षा में इतना उन्मादी क्यों हो जाता है कि पैरों की जमीन को भी सिर पर रखना चाहता है? इंसान क्यों भूल जाता है कि जब पैरों की जमीन सिर पर आ जाएगी तो पैर कहाँ रखेंगे? उनका आलंबन क्या होगा? अब इस घने अक्लमंद व्यक्ति को यह बात कौन समझाए कि कुछ काम असंभव ही नहीं, हास्यास्पद भी होते हैं।

तीव्र ज्वर से पीड़ित चारपाई पर लेटा कोई व्यक्ति पास बैठे व्यक्तियों से पूछ रहा था कि मेरी चारपाई किस दिशा में उड़ रही है? लोग उसे तरह -तरह उत्तर दे रहे थे। कोई कहता- 'पूरब को उड़ रही है', कोई पश्चिम को बताता तो कोई कुछ कहता। कितनी विचित्र घटना थी, कितना विचित्र प्रश्न और उससे भी विचित्र उसका उत्तर देने वाले। यदि कोई कहे कि मन बहलाने के लिए एक दिशा तो बतानी पड़ेगी, तो उसे चुप कराना पड़ेगा अन्यथा बड़ी गड़बड़ हो जायेगी।

पीड़ित का ज्वर जब देर-सवेर शाँत होगा तो फिर क्या होगा? आपके उत्तर के कारण क्या वह आपको मूर्ख नहीं कहेगा? तुम पर हँसेगा नही?"

"मैं तो बेहोशी में कह रहा था लेकिन आप तो होश में थे। अपनी सारी होशियारी ताक पर रख दी."

निसंदेह हर सवाल का जवाब मिल सकता है लेकिन शर्त ये है कि वो सवाल हो।

इंसान अब अक्सर ऐसे ही प्रश्न करने लगा है और कोई प्रश्न सुनकर चुप हो जाए तो समझता है, उसके पास उत्तर नहीं है। इतना ही नहीं, कभी-कभी प्रश्नकर्ता उत्तर की तलाश में खुद ऐसे अंधेरे जगत में भटक जाता है जहाँ वास्तविकता होती कुछ है और वह उससे दूर होता चला जाता है। यदि, इस मनुष्य को होश आ जाए और अपने उनीदेपन का पता चल जाए तो यह प्रश्न ही नहीं करेगा। वास्तव में वह पहले होश में ही था लेकिन उसके हस्तक्षेप ने अहं ज्वर से पीड़ित कर दिया। सूरज छिपा ही कब था कि जिसका निकलने का इंतजार किया जाता। गलती हमारी है कि हमने उसकी तरफ पीठ कर ली, गलती हमारी है कि हमने जंजीरे बनाई और उससे बड़ी गलती उनको (विचारों को) खुद ही पहन लिया और भूल गए कि जब पहना स्वयं है तो उतार भी स्वयं ही सकते हैं। सब उलझा हुआ है कि अखिल विश्व के छोटे से आँगन में खेलता हुआ यह मन ऐसे बंधनों मे फँस गया जो अंतहीन दलदल के समान है।

अब तलाश है तो उस दिव्य शक्ति की जो उसे बंधन मुक्त कर सके।

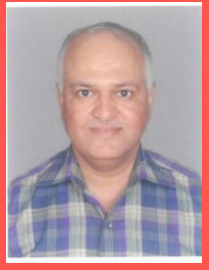

सुधीर कुमार भारद्वाज
दिल्ली
मो. 9810085280

# सुनने में आया है

'सुनने में आया है' शब्दों का प्रयोग कर अफवाह फैलाने वालों को मेरा साष्टाँग दँडवत प्रणाम। गर्व है हमें देश के सच्चे सपूतों पर। भगवान इस कला के मर्मज्ञों को दिन-दूनी रात-चौगुनी प्रगति दें।

रमेशजी आपके सहकर्मी हैं तथा आपकी उनसे बनती नहीं हैं। आजकल रमेशजी रोज देर रात तक ऑफिस में कार्य कर रहे हैं अत: घर आठ-नौ बजे ही पहुँच पाते हैं। आप एक दिन साँय छह बजे उनके घर पहु च जाइए। उनकी श्रीमतीजी से पूछिए कि रमेश भाई साहब घर में हैं? नहीं पहुँचे क्या? ऑफिस से तो रोज साढ़े पाँच, क्या, कुछ पहले ही निकल आते हैं। मैं इधर से गुजर रहा था सो सोचा खैर खबर पूछता चलूँ। (यह अलग बात है कि आपका घर शहर के इस छोर में है तथा रमेशजी का उस छोर)। वैसे, 'सुनने में आया है कि रमेश जी आजकल मदिरापान करने वालों की संगति में कुछ ज्यादा रहते हैं।' इतना कह कर लौट आइए। गीता उपदेशानुसार आप केवल कर्म करें फल की इच्छा मत करें। वैसे फल तो रमेश भाई साहब का इन्तजार कर ही रहा है। नेकी कर रमेश के घर डाल।

आपके दूसरे सहकर्मी श्यामसुंदर जी बॉस से परेशान रहते हैं। आप केवल इतना कहिए कि 'सुनने में आया है कि कल बॉस प्रधान कार्यालय में आपको योग्यता, कार्यप्रणाली और क्षमता पर कुछ संदेह व्यक्त कर रहे थे, पक्का पता नहीं है केवल सुनने में आया है। आप अपने आदमी हैं सोचा बता दूँ। यह अलग बात है कि बॉस ऐसा कुछ नहीं कह रहे थे पर आपको क्या? श्यामजी की रातों की नींद हराम हुई या दिन का चैन, आपको क्या?

आपके मोहल्ले का बनिया हर सौदे का भाव अधिक ही लगाता है। तौलता भी कुछ कम ही है। आप उससे प्रेम से बतियाइए। बाद में कह दीजिए कि 'सुनने में आया है कि खाद्य विभाग के अधिकारी इस इलाके की दुकानों का निरीक्षण करने आ रहे हैं। चूंकि फूड इंस्पेक्टर अपना दोस्त है और मोहल्ले का मामला है इसीलिए आपको आगाह कर रहा हूँ।' अब अधिकारी आए या मंत्री, आपकी बला से। आपको ठीक तोल का सामान आराम से उधार में मिलेगा। पैसे देने पर भी बनिया कहेगा, अजी आ जाएंगें, घर की ही तो बात है।

आपसे प्रार्थना है कि जहाँ तक हो सके 'सुनने में आया है' जैसे मधुर, कर्णप्रिय, व्यवहार कुशल, सफल, आजमाए हुए सिद्ध जुमले का अपने हित में अधिकाधिक प्रयोग करें। वैसे सुनने में आया है कि आपके पड़ोसी ने बिजली विभाग वालों से मिल कर ऐसा जुगाड़ किया है कि उसकी मीटर रीडिंग आपके मीटर पर आएगी। आप अपने खास आदमी हैं। सोचा आप क्यों पड़ोसी द्वारा खर्च की गई बिजली का बिल भरें। अब आपके बारे में आपके पडोसी गुप्ता जी क्या-क्या बात करते हैं, इस बारे में क्या कहूँ? आपके पड़ोस से ही सुनने में आया है। पक्का तो नहीं कह सकता, पर सुना है।

आपका हितैषी

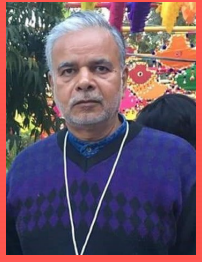

रवि दत्त गौड
मुंबई
मो. 9820994672

# अपने-अपने स्वार्थ

एक वीणा टूट गई। सुधारने वाले ने नया तार लगा दिया और पुराना तार कोने में फेंक दिया। कुछ दिन बाद टूटा तार रद्दी के साथ कबाड़ी को बेच दिया गया। कबाड़ी ने सारा कबाड़ कोने में पटका और एक जगह बैठकर सुस्ताने लगा कि उसकी नींद लग गई। नींद में सपने में क्या देखता है कि कबाड़खाने में तार सुबक रहा था कि एक बड़े लोहे के टुकड़े ने उससे पूछा "क्या हुआ?"

"कुछ नहीं भैया! यूँ ही।" टूटा तार जोर से रोते हुए बोला।

"कुछ तो हुआ होगा? यूँ ही तो कोई रोता नहीं है?" लोहे के टुकड़े ने कहा।

"भैया! एक बार मैं वीणा में क्या टूटा कि मेरे लिए सारी दुनिया विपरीत हो गई। मुझे याद आ रहा है कि कितनी सहजता और स्नेह से मुझे अंगुलियां सहलाती सी थी और मैं भी ऐसी झंकार देता था कि सब लोग मंत्रमुग्ध हो जाते थे और अब देखो! पूरा छलनी हो गया हूँ चोट सहते सहते। यह कबाड़ी वाला ज़रा भी तरस नहीं खाता, मोटा मोटा कबाड़ मुझ पर फेंकते हुए।"

लोहे का टुकड़ा हँस पड़ा। कहने लगा "तुम्हें पता है, मैं घर की छत में लगा था। छाँव देती थी छत। बारिश और न जाने क्या क्या सहा। एक दिन मकान ऊपर नीचे सब तरफ़ से चूने लगा। मकान मालिक को किसी ने बताया कि मकान को ढ़हा कर नये तरीक़े से बनाना उचित होगा,चूंकि वह जर्ज़र हो चुका था और उसके अनायास गिरने से वहाँ रहने वालों के जीवन को खतरा था। मकान तोड़ा गया और नया बना और मुझे तुम्हारी तरह यहाँ बेच दिया गया।"

लोहे के टुकड़े ने ज़ारी रखा। "हम सही ढंग से बँध जाते हैं और बँधे रहते हैं तो कहीं संगीत देने लगते हैं, कहीं छत बन जाते हैं और कहीं कुछ और। मनुष्य नियंता है हमारा और वही तय करता है हमारा भविष्य।"

"वह सब तो ठीक है। पर मैंने तो उसे कितनी संतुष्टि और कितना आनंद दिया था। मेरे उपकारों के बदले उसे तो मुझे सजाकर रखना चाहिए था।" टूटे तार के भावों में आक्रोश झलक रहा था।

"हा...हा....हा..." लोहे का टुकड़ा हँस पड़ा। बोला "फिर तुम मानव को नहीं जानते। अपने स्वार्थ के लिए वह कुछ भी कर सकता है। मुझे ज़रा बताओगे कि क्या तुम उसके शरीर के अविभाज्य अंग हो?"

"नहीं, पर मैंने उसे मानसिक संतुष्टि दी है। उसे प्रसन्न किया है।" टूटा तार क्रोध में बोला।

"उसके शरीर से तो नहीं जुड़े हो न? मैं तुम्हें समझा दूँ कि वह अपने गर्व, आत्मसंतुष्टि,

आत्मसम्मान और अहंकार के लिए चाकू, फरसा, बंदूक, बम जैसे सृष्टि संहारक अस्त्र शस्त्रों की पूजा तक करता है। लेकिन उसके हाथ में चोट लग जाय और वहाँ विष फैल जाए, तो वह अपना हाथ तक कटवा कर फेंक सकता है।" लोहे के टुकड़े ने गंभीरता से कहा।

"आप यह कहना चाहते हैं कि हमारा कोई अस्तित्व नहीं है, उसके लिए?" तार ने उसाँस भरते हुए कहा।

"किसने कहा कि नहीं है? उसके लिए तुम्हें जीवंत बने रहना है। वीणा में बंधा तार सप्त स्वरों के संग ही प्राणमय है। जिस दिन स्वरों में संगीत समाप्त, तार का क्या काम? मनुष्य की ज़िन्दगी में सामयिक और सार्थक बने रहोगे तो वह तुम्हारा पूजन भी करेगा। इसके विपरीत जिस दिन तुम उस पर बोझ बन जाओगे तो फिर जैसे वह अपने विषाक्त हाथ को काट कर फेंक सकता है, तो तुम से तो उसका कोई अटूट बंधन भी नहीं है कि वह तुम्हें अपने सीने से लगाकर रखे।" लोहे के टुकड़े ने कहकर टूटे तार की ओर देखा।

तार शाँत था। थोड़ा संभलकर बोला "समझा। मैं अब किसी काम का नहीं रह गया हूँ।"

"ऐसा किसने कहा? तुम वीणा वादक के लिए कुछ काम के नहीं हो, यह सही है लेकिन इस कबाड़ी के लिए तुम उसकी रोज़ी रोटी हो। इसीलिए तुम और मैं आज यहाँ हैं। यह हमें जिसे बेचेगा वह हमें तपायेगा, गलायेगा, कूटेगा, पीटेगा और फिर से हमारा नया स्वरूप गढ़कर बाज़ार में बेचेगा। हमारी कीमत और बढ़ेगी। पर ये सब व्यापारी हमसे लगाव या जुड़ाव नहीं रखेंगे। कुछ समझे?" लोहे के टुकड़े ने शाँत भाव से कहा।

"कितना कष्टप्रद होता है ना, अपने अस्तित्व को खोना?" तार बोला।

"नहीं। अब आगे से तुम यह सोचो कि तुम नये अवतार में अपनी उपयोगिता तो बनाये रख पाओगे।....." लोहे का टुकड़ा आगे कुछ कहना चाह रहा था कि कुछ खटपट हुई और कबाड़ी की आँखें खुल गई। देखा कि खरीदार गाड़ी लेकर खड़ा है और नौकर लोहे के टुकड़े के साथ साथ तार को भी तोलने के लिए तराज़ू पर रख रहा है।...

वह सोच रहा था कि लोहे का टुकड़ा, टूटा तार सभी तो निर्जीव हैं। स्वप्न भी कहाँ सजीवता लिए होते हैं, बल्कि साकार न होते हुए भी सुषुप्त भावों के साथ क्रीड़ा करते रहते हैं और कई बार कितना बड़ा संदेश भी दे जाते हैं। उसने नौकर को आवाज़ देते हुए कहा 'इस तार और लोहे के टुकड़े को दूकान के मंदिर में रख दो और कल से ध्यान रहे कि भगवान के साथ साथ इनकी भी पूजा हो।"

नौकर आश्चर्य चकित था। वह तार और लोहे के टुकड़े को मंदिर में रखते हुए सोच रहा था "'लगता है सेठ को किसी ज्योतिषी ने बताया है कि ऐसा करने से धंधे में बरकत होगी, इसीलिए ऐसा कर रहा है। ख़ैर मुझे क्या? लेकिन भगवान करे कि ज्योतिषी की भविष्यवाणी फलीभूत हो, ताकि सेठ का लाभ हो और मुझे भी और तनख़्वाह में अच्छी बढ़ोत्तरी मिले ....।"

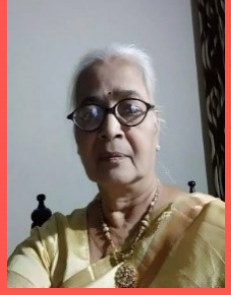

**सुधा गोयल,**
बुलन्दशहर (उत्तर प्रदेश)
मोबाइल नंबर-9917869962

व्यंग्य

# पितर गोष्ठी

पितरों का अपने अपने घर लौटना- खुशी और श्रद्धा का पर्व। पूर्णमासी से अमावस्य तक 16 दिन, घरों में पकवानों की खुशबू, पंडितों का यजमानों के घर सज-धज कर जाना, दान-दक्षिणा ग्रहण करना, घर की मुडेरों पर कौवों की काँव-काँव का बढ जाना, यानि पितृपक्ष का प्रारम्भ हो जाना। मानो वे पितरों के आने की सूचना दे रहे हैं। अब क्या पता पितर ही उनके रूप में पधारे हों। घर के द्वार पर खड़ी गाय ग्रास के इन्तजार में रम्भाती है और गली मे आवारा कुत्तों की चहल-पहल भी बढ़ जाती है। पितरों का आना सबको मालूम हो जाता है क्योंकि सबके हिस्से श्राद्ध वाले दिन जरूर निकलते हैं। उन्हें खाकर पितृगण तृप्त होते हैं या पशु-पक्षी, मुझे नहीं मालूम।

पुत्रों का कार्य पितरों को तृप्त करना है। घर मे पूर्वजों की खट्टी-मीठी यादों की जुगालियाँ होने लगती हैं। इसी बहाने यादों का दौर आ जाता है। उधर पितृगण भी सज-धज कर अपने-अपने घर लौटने की भागमभाग मचाते हैं। उन्हें भी चिन्ता रहती है कि समय से घर नहीं पहुँचे तो उनका भाग कौन ग्रहण करेगा। जीते जी बेटे ने कभी सूखा टूक भी नहीं दिया पर अब तर माल बनवाता है। चलो, इसी बहाने तृप्त हो लेते हैं। पितरों के कुछ दुख इस प्रकार के होते हैं - किसी के बेटे ने घर बदल लिया है क्योंकि उसे हर साल किराए का घर बदलना पड़ता है, किसी के बेटे ने पुराना घर बेचकर कहीं नया घर ले लिया है, किसी का बेटा विदेश चला गया है और श्राद्ध कर्म को वाहियात मानता है। बहुतों को अपने बच्चों के घर ही नहीं मिले, ढूँढ-ढाँढ़ कर लौट आए हैं।

हाँ इस ढूँढने में इतना लाभ जरूर हुआ कि पड़ोसी और दोस्त जरूर मिल गये। सब मिल बैठ कर अपनी-अपनी पीड़ा बाँट रहे थे। किसी ने कहा कि जिन्होंने जीते जी कभी दुख-दर्द नहीं पूछा, भरपेट खाना नहीं दिया, हमेशा गलियाते और लताड़ते रहे, हम वहाँ क्यों जा रहे हैं? क्या उतने अपमान से पेट नहीं भरा?

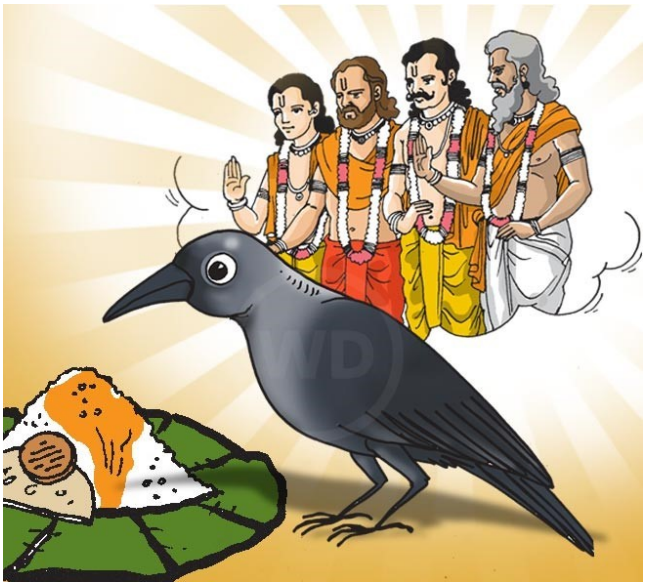

पितरों की इस रेल-पेल में अचानक सुदर्शना अपने पति रमाकांत से टकरा गई। उन्हें भी स्वर्गवासी हुये दसियों साल हो गये थे। लेकिन कभी आपस मे मिले नहीं। आज मिले तो गलबहियाँ हुई, फिर गिले शिकवे और एक जगह बैठकर थोड़ी देर वार्तालाप-

सुदर्शना-"कहाँ दौड़े जा रहे हैं?"
"वहीं, अमर के पास"
"वह तो विदेश मे है"
"तुम्हें कैसे पता"?

"मुझे एअरपोर्ट के बाहर बिठाकर यह कहकर चला गया कि तुम जरा बैठो, मैं अभी टिकट लेकर आता हूँ। मैं अगले दिन तक वहीं बैठी रही। वह लौटा ही नहीं। किसी ने बताया कि आपका बेटा तो बीवी-बच्चों के साथ इंग्लैंड चला गया। घर लौटी तो वहाँ किसी और को पाया। ठगी सी खड़ी रह गई। उन्होंने ही बताया कि अमर घर उन्हें बेच गया है। मैं तो सड़क पर ही आ गई थी, पर जिन्होंने घर खरीदा था उन्होंने बाहर वाली बैठक मुझे रहने को दे दी। वह तो गनीमत रही कि कुछ पैसे बैंक खाते में थे, जिनका अमर को पता नहीं था।

"तुमने तो बड़ा कष्ट झेला?"
"तुमने भी कभी सुख नहीं दिया, सब कुछ अपने बेटे को दिया."
"अभी तक ताने मारने की आदत नहीं गई."

"हाँ अब मुझे चलना चाहिए। ज्यादा देर तक एक जगह रुक नहीं सकते। तुम तो इंग्लैंड जा रहे होगे?" सुदर्शना कहते कहते अपनी राह चली गई। तभी पीछे से एक आवाज आई, "मैं तो वृद्धाश्रम में मरी", "मै बेटी के यहाँ।" दामाद सारे समय कौंचता रहता था जबकि सब कुछ उसे सौंप दिया था"

"मै तो सड़क पर कूड़ा बीनते मरी."
"फिर कहाँ जा रही हो?" एक आवाज ने सवाल उछाला.
"कहीं नहीं, हम भी तुम्हारी तरह सैर को निकल आए हैं। आना-जाना कहीं नहीं है, जहाँ हैं वहीं तृप्त हैं।"

इसी प्रकार सुख-दुख बाँटते, बोलते-चालते, अपना पिछला जीवन याद करते सब स्वर्ग लौट जाते हैं, अगले साल फिर मिलने के लिए।

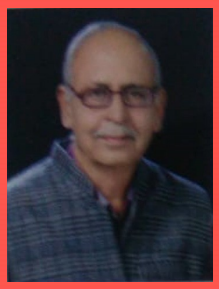

डॉ. वेद प्रकाश 'अमिताभ'
अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)
ईमेल: amitabhved1947@gmail.com

# बलि

पॉश कालोनी 'देव विहार' चारों ओर सात फिट ऊँची दीवार से सुरक्षित थी। एक बड़ा सा गेट था। गेट पर चार वॉचमैन मुस्तैद रहते थे। कालोनी से थोड़ा हटकर एक मलिन बस्ती थी। झाड़ू-पौंछा, सड़क की सफाई, कपडों की धुलाई, कपडों पर प्रैस अर्थात् कालोनी के पूरे मेकअप की जिम्मेदारी यही मलिन बस्ती संभालती थी। इस बस्ती के बच्चे अपने माँ-बाप के साथ कालोनी के गेट तक ही जा पाते थे। उन्हें कालोनी के पार्क में घूमने और खेलने की इजाजत नहीं थी। कुछ खास मौकों पर उनके लिए गेट खुल जाता था। कालोनी के स्थापना दिवस पर जो बड़ा भंडारा होता था, उसका प्रसाद वे ले सकते थे। 'नवरात्र' के दिनों में छोटी बच्चियाँ और बच्चे 'कन्या लांगुरा' के रूप में पूरी कालोनी में घूम फिर सकते थे। कन्याओं की पूछ कुछ ज्यादा होती थी। हर दरवाजे को उनकी पुकार की प्रतिक्षा रहती थी, 'कन्या लाँगुरा जिमाय दो, आँटी जी'। दोपहर बाद वॉचमैन सक्रिय हो जाते थे और उन्हें खदेड़ कर बाहर कर दिया जाता था। खदेड़ना इसलिए पड़ता कि कुछ बच्चे-बच्चियाँ छूट की इस अवधि का उपयोग पार्क की घास पर 'आइस-पाइस' खेलने और फूल तोड़ने में करने लगते थे जो बाद में कालोनी के देवों-देवियों के क्षोभ और क्रोध का कारण बनता था।

इस साल तय हुआ कि बाहरी बच्चे कालोनी को गंदा नहीं कर पायेंगे। अपनी कॉलोनी में कन्या लांगुरा नहीं हैं क्या.... नवमी के दिन देवनगर में देर तक सन्नाटा रहा। फिर कुछ लांगुरा आते-जाते दिखाई दिए। लेकिन कन्याएँ मुश्किल से तीन-चार। कम से कम नौ तो होनी चाहिएँ – भद्र पुरूषों और महिलाओं की चिंता का अंत नहीं था। वे भूल गए थे कि वे स्वयं तमाम कन्याओं को एक-एक करके 'अल्ट्रासाउंड' की बलि चढ़ाते रहे हैं।

**नीरज दीक्षित**
कानपुर-उत्तर प्रदेश
मो. 9415766643

# एयरफोर्स-वन

यदि राजनेता नहीं होते तो जीवन कितना नीरस, बोझिल, स्थिर एवं लक्ष्यविहीन होता। हमारी तमाम कुंठाओं, अकर्मण्यताओं और शिकायतों को यही राजनेता अपने कंधों पर उठाने का माद्दा रखते हैं। हमें पता ही नहीं होता कि हमारी आकाँक्षाएँ एवं शिकायतें, उस एयरफोर्स-वन की तरह होती हैं जो किसी भी रूप में हमारे परिवार, समाज और नियोक्ता द्वारा न तो पूरी की जा सकती हैं और न ही निस्तारित की जा सकती हैं। इसके लिए हमें राजनेता का ही संबल होता है।

एयरफोर्स-वन किसी आम हवाई पट्टी पर नहीं उतर सकता, उसे अपनी भार क्षमता और विशालता के अनुकूल एयरपोर्ट चाहिए। बस यहीं राजेताओं की छाती और कंधे हमारे सामने बिछे नज़र आते हैं, जहाँ हम अपनी आकाँक्षाओं और सपनों के एयरफोर्स-वन उतार सकते हैं।

जब हम सपने भी यह सोचकर देखते हैं कि कोई और इन्हें साकार करेगा, तब ऐसे राजनेताओं की उपयोगिता कभी समाप्त नहीं हो सकती। सच कहा जाए तो हमारा विज़न, राजनेताओं के विज़न से बहुत बौना होता है और ऐसा भी नहीं है कि वो हमें भ्रम में रखते हैं बल्कि वो हर क्षण हमारे अदृश्य सपनों को पूरा करते हुए दिखते भी हैं।

नमन है ऐसे शूरवीरों को, जो हम जैसे अकर्मण्य लोगों की अतिरंजित आकाँक्षाओं का एयरफोर्स-वन अपनी छाती पर उतारने का हौसला रखते हैं।

# बहुआयामी मोबाइल बनाम मातहत

हर व्यक्ति अपने कार्यालयीन, सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन में कहीं न कहीं बॉस या मातहत जरूर होता है। पदक्रम के परिप्रेक्ष्य में हम अपने मातहतों से वैसा ही व्यवहार करते हैं जैसा हम अपने बहुआयामी मोबाइल के साथ करते हैं। जिस तरह हम अपने मोबाइल को कभी गहराई में जाकर एक्सप्लोर नहीं करते हैं, वैसे हम अपने मातहत को भी एक्सप्लोर नहीं करते। यहाँ मिसहैंडलिंग का भय तो होता ही है, लेकिन फीचर की अज्ञानता अधिक होती है। हम इसी भय तथा अज्ञानता के कारण मोबाइल का प्रयोग सिर्फ कॉल करने तक ही सीमित रखते हैं।

बोझ बन जाने के भय के चलते, हम मोबाइल को चार्ज करते रहते हैं. अमूमन हम अपने तथाकथित स्टेटस सिंबल की वजह से इसे साइलेंट रखना पसंद करते हैं। दोनों ही अपनी अद्भुत क्षमताओं के बावजूद बिना शिकायत, इस व्यवस्था को अनवरत ढोते जाते हैं। यहाँ यह तथ्य ध्यान रखने योग्य है कि व्यवस्था की विडंबना के कारण मोबाइल स्वयं को या अपने धारक को एक्सप्लोर नहीं कर सकता। मोबाइल हैंग या बैटरी डाउन होने या नई तकनीक के चलते निष्प्रभावी होने पर, धारक के लिए इसको रिप्लेस करना आसान विकल्प होता है, विशेष रूप से जब नए मोबाइल को भी उसे कभी एक्सप्लोर नहीं करना है।

सहेजी गई सूचनाओं के चलते ऐसे मोबाइल को सैद्धांतिकता के नाम पर इनएक्टिव मोड में रख लिया जाता है। इतिहास गवाह है कि जिसने मोबाइल को जितना एक्सप्लार किया है, उसे उतना ही लाभ मिला है।

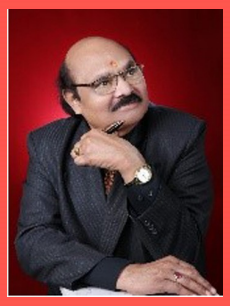

डॉ. देवकीनंदन शर्मा
गुलावठी-बुलंदशहर-उ.प्र.
मो. 9837573250

यात्रा संस्मरण

# खंडहर बचे हुए हैं.....

'हलो, शर्मा जी! कल आप वार्ता रिकार्डिंग के लिए नजीबाबाद आ ही रहे हैं; क्यों न इस अवसर को यादगार बना लिया जाये? यहाँ से 11-12 किमी दूर हिन्दी गज़ल नायक दुष्यंत कुमार जी का जन्म-स्थल है, वहाँ चलकर इस साहित्य तीर्थ को नमन किया जाये?' फोन पर वरिष्ठ कलाविद् और साहित्यकार इन्द्र देव भारती का यह आमंत्रण पाकर मेरी यात्रा को जैसे पंख लग गये। मेरी अन्तश्चेतना में कालजयी कलमकार दुष्यंत कुमार का व्यक्तित्व-कृतित्व सजीव हो उठा।

उत्तरप्रदेश के जनपद बिजनौर की तहसील नजीबाबाद के गाँव राजपुर नवादा में जन्मे दुष्यंत कुमार जी यद्यपि आकाशवाणी दिल्ली में पटकथा लेखक, आकाशवाणी भोपाल में सहायक केन्द्र निदेशक और मध्य प्रदेश के संस्कृति विभाग के भाषा अनुभाग में सेवारत रहे; तथापि उन्हें हिन्दी साहित्य में अतुलनीय योगदान के लिए कालजयी कलमकार के रूप में याद किया जाता है। कविता और गज़ल ने उन्हें बेशुमार शोहरत दिलायी, आम आदमी की संवेदना ने उन्हें तद्युगीन युवा पीढ़ी की प्रेरणा बना दिया। वे सच्चे अर्थों में कालजयी कलमकार थे, इसीलिए उनके स्वर आज भी संसद से सड़क तक गूंज रहे हैं। अत्यंत उत्साहित होकर मैं इस विशिष्ट अवसर की प्रतीक्षा आतुरता के साथ करने लगा।

14 जून 2022 को लगभग 1बजे मध्याह्न वार्ता रिकार्डिंग से फ्री होकर हम भारती जी के साथ दुष्यंत कुमार जी के पैतृक गाँव राजपुर नवादा के लिए चल दिए, लगभग आधा घन्टा बाद हम वहाँ पहुँच गये। मुख्य मार्ग से राजपुर नवादा की ओर मुड़ने पर ग्रे नाइट पत्थर से बने विशाल स्वागत द्वार, जिस पर 'कविराज दुष्यंत त्यागी जी स्मृति द्वार' लिखा था, से एक फर्लांग चलकर श्री धर्मेन्द्र कुमार त्यागी के आवास पर पहुँचे। यहाँ वयोवृद्ध श्री सत्यकुमार त्यागी से भेंट हुई। यह परिवार दुष्यंत कुमार जी के

परिजनों का ही था। आत्मीयतापूर्ण वार्तालाप में इन्होंने बताया कि दुष्यन्त कुमार जी बहुत ही सरल और सहज स्वभाव के मनमौजी इंसान थे, वे सभी से अपनत्व मानते थे; उनकी प्रसिद्धि से परिजनों और ग्रामवासियों में गर्व का भाव था। अनेक प्रसंग सुनाते हुए वे भावुक भी हुए। वयोवृद्ध श्री सत्य कुमार त्यागी ने अंगवस्त्रम् पहनाकर मेरा स्वागत भी किया। सभी का स्नेहसिक्त व्यवहार मुझे अभिभूत कर गया।

अब श्री आलोक कुमार त्यागी के साथ हम दुष्यंत कुमार जी के पैतृक निवास की ओर चल पड़े ... आम गाँव जैसी सड़कें, आम गाँव जैसे घर .., गलियों में खेलते अल्हड़ बालकों की टोलियाँ, नुक्कड़ों पर मोबाइल चलाते युवाओं के झुंड, घरों के बरामदों में आराम करते हुक्के गुडगुडाते बुजुर्ग. .. तभी आलोक जी ने हवेलीनुमा पुराने भवन के सामने ड्राइवर को गाड़ी रोकने को कहा... गाडी से उतरते ही हम 'राम जानकी भवन' के सामने खड़े थे, आलोक जी ने बताया यही दुष्यंतकुमार जी का पैतृक स्थान है; देखकर मुझे झटका-सा लगा... अत्यंत बदहाल जर्जर भवन ... टूटे दरवाजे, आँगन में झाड-झंगड, कमरों में मकडियों के जालों का आधिपत्य, दीवारों से झडती मिट्टी..... कमरे की खूँटी पर लोहे के तार में पुरानी चिट्ठियां ..... सबने मुझे अन्दर तक हिला दिया.....

वहाँ की हर चीज जैसे कह रही थी, कभी हमारा भी समय था, पूरे शान -शौकत ऐशो-आराम का ....हमने ही तुम्हें नायाब तोहफा दिया है... कलमकार दुष्यंत कुमार, जिसने अपनी काबलियत का डंका दुनिया में बजाया..... सुनते - सुनते वहाँ की माटी को मैने मस्तक पर लगा लिया ..

जल्दी ही हम वापस लौट लिए। गाडी में काफी देर तक खामोशी छायी रही। भारती जी ने पूछा, कैसा लगा, शर्मा जी? कुछ कहते नहीं बन पडा रहा था। कुछ पल बाद मैंने कहा, दुष्यंत कुमार जी की पैतृक माटी को मस्तक से लगाकर गौरवान्वित अनुभव कर रहा हूँ.....मगर बदहाल पैतृक आवास को देखकर व्यथित हूँ....रह-रह कर मन में आ रहा था, परिजनों और ग्रामवासियों का कोई दायित्व नहीं है, सिर्फ सरकार का ही दायित्व है? तभी मुझे आलोक जी ने बताया कि केन्द्र सरकार ने साढे छह करोड़ रुपये की धनराशि स्वीकृत कर दी है। मुझे मेरे प्रश्न का उत्तर मिल गया था। उम्मीद की जानी चाहिए कि यहाँ जल्दी ही भव्य स्मारक, संग्रहालय और पुस्तकालय आदि का निर्माण हो सकेगा और यह पावन स्थली अपनी गरिमा पा सकेगी। फिलहाल तो, मेरे जेहन में दुष्यंत कुमार जी के बोल गूंज रहे हैं-

**"खंडहर बचे हुए हैं, इमारत नहीं रही**
**हमने तमाम उम्र अकेले सफर किया**
**हम पै किसी खुदा की इनायत नहीं रही"**

**मधु वार्ष्णेय**
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश
मो. 9410615755

यात्रा संस्मरण

# उदयपुर डायरी (मानसून पैलेस)

दोपहर का समय था हमने लंच किया और सिटी पैलेस से चंद कदमों की दूरी पर स्थित जगदीश मंदिर देखने का निश्चय किया लेकिन मंदिर के कपाट बंद थे, अत: हमने मानसून पैलेस देखने जाने का निर्णय लिया और समय व्यतीत किए बिना हम मानसून पैलेस देखने के लिए रवाना हो गए। उदयपुर से 8 किलोमीटर दूर पिछोला झील के पश्चिम में स्थित मानसून पैलेस राजस्थानी स्थापत्य कला की छटा बिखेरता एक खूबसूरत किलेनुमा महल है, वास्तु शिल्प का अद्भुत नमूना.....

अरावली पर्वत श्रृंखला की बाँसदारा चोटी पर समुद्र तल से 944 मीटर की ऊँचाई पर बना यह मानसून पैलेस अपने आप में एक दर्शनीय स्थल है। इसे सज्जनगढ़ के किले के नाम से भी जाना जाता है। इसे सज्जन सिंह ने 19वीं शताब्दी के आसपास मौसम की निगरानी के लिए बनवाया

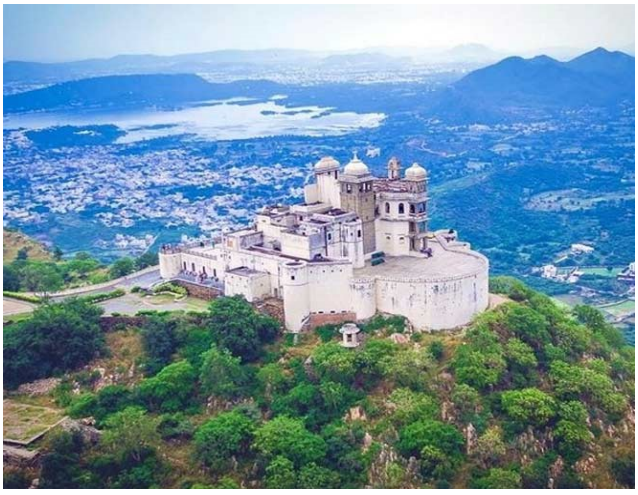

था। महाराणा पहाड़ की चोटी पर स्थित इस इमारत को पाँच मंजिला एस्टॉनोमिकल सेंटर बनाना चाहते थे किंतु इसके निर्माण के मध्य ही महाराणा की मृत्यु हो गई जिसके कारण इसका निर्माण स्थगित हो गया। बाद में यह मानसून पैलेस और शिकारगाह के रूप में पहचाना गया। गाइड के अनुसार महाराणा ने इसका निर्माण अपने गृह नगर चित्तौड़ गढ़ को देखने के लिए कराया था। पहले यह मेवाड़ के शाही परिवार के आधिपत्य में आता था किन्तु अब यह राजस्थान वन विभाग के अंतर्गत आता है। कुछ दिन पहले ही इसे आम जनता के दर्शनार्थ खोला गया है। इस किले को उदयपुर का मुकुट मणि भी कहा जाता है।

ऊपर किले तक जाने के लिए संकरी घुमावदार सड़क थी जहाँ पर्यटकों को ले जाने के लिए खुली जीप की व्यवस्था थी, संकरे रास्ते और तीखे मोड़ों से गुजरते हुए दोनों तरफ की ऊंची नीची ढलावदार पहाड़ियों को पार करते हुए हमारी उत्सुकता बढ़ती ही जा रही थी, हम बहुत रोमाँचित थे। पहाड़ियों पर कम ऊँचाई वाले पेड़,कंटीली और कुछ सूखी कुछ हरी झाड़ियां ही दिखाई दे रही थीं, कहीं कहीं नीची खाई और गड्ढे थे।

लंगूर और दूसरे वन्य जीव भी दिखाई दे जाते करीब बीस मिनट में ही हम ऊपर पहुँच गए यहाँ से हमें ऊपर किले तक पैदल ही जाना था। चौड़ा पक्का रास्ता था, कहीं कहीं सीढ़ियां भी थीं। मैं ऊपर पहुँच कर मुख्य द्वार को देखकर आश्चर्य चकित थी। बड़ी बड़ी कीलों से सज्जित विशाल

भव्य दरवाजे के अंदर प्रवेश किया। महल की दीवारों को चूना पत्थर और विशाल शिलाओं से निर्मित किया गया था। बहुत विशाल आंगन, फिर गलियारे, खूबसूरत नक्काशीदार झरोखे, मेहराब और ऊँची गोलाकार छतों वाले हवादार कमरे थे। किले के मध्य में संगमरमर के स्तंभों के शिखर पर उत्कीर्ण बेल बूटे और फूल पत्तियों की नक्काशी बहुत सुंदर थी। देखकर मन परी कथाओं में वर्णित कल्पित महल में विचरण करने लगा। इसकी पहाड़ पर स्थित लोकेशन और वास्तुकला से प्रभावित होकर 1983 में जेम्स बॉण्ड की चर्चित मूवी ओक्टोपसी को यहीं फिल्माया गया था।

घूमते हुए कब दूसरी मंजिल पर पहुँच गए पता ही नहीं चला। किले के मुख्य हॉल में वन विभाग का आफिस था नियुक्त कर्मचारी उस इलाके में पाए जाने वाले जंगली जानवरों की बड़ी बड़ी तस्वीरों के माध्यम से पर्यटकों को जानकारी उपलब्ध करा रहे थे। यही सब देखते हुए किले के पिछले भाग में पहुँच गए। अहा,!! क्या अद्भुत दृश्य था एक तरफ तो सूरज बादलों से आँख मिचौली करता हुआ अपनी सिंदूरी आभा से पूरे आसमान को सतरंगी परिधान में ढाँपे हुए था, वहीं दूसरी तरफ गहरे स्लेटी और भूरे बादलों की छाया से ढकी ऊँची नीची पहाड़ियां जादुई प्रतीत हो रही थीं। उदयपुर की धुंधली छवि, विस्तृत जंगल और वन्य जीवों की आवाजें एक रहस्यमयी वातावरण बना रही थी।

पल-पल मौसम बदल रहा था। देखते देखते ही सूरज की सिंदूरी आभा विलुप्त हो गई और चारों ओर अँधेरा छा गया। साढ़े चार बजे थे लग रहा था सूरज अस्त हो चुका है। बारिश की हल्की फुहार के साथ हवा की रफ्तार तेज होने लगी, तेज हवा के झोंके और जंगल में साँय साँय की आवाज भय का वातावरण सृजित कर रहे थे। तेज हवा पैर उखाड़ने लगी और वहाँ खड़ा रहना मुश्किल होने लगा। हमने दौड़कर अन्य पयर्टकों के साथ मध्य में स्थित हॉल में शरण ली।

कुछ ही मिनटों में बादल साफ हो गए और तेज हवा का रुख भी नरम पड़ गया। फिर से धूप खिल गई। मैं झरोखों की नक्काशीदार जालियों को देखते और बुर्जियो पर बैठकर तस्वीर खिंचवाते हुए आनंदित थी... हमने किले के अग्रिम भाग में प्रवेश किया दोनों तरफ रानियो के कमरे थे और एक बहुत बड़ी बालकनी, वहाँ से आगे एक बहुत सुंदर बगीचा भी था तरह तरह के फूलों से लदे वृक्ष मुझे आकर्षित कर रहे थे, नीले रंग के कमल पुष्प पहली बार देखे। हम महल के अग्रिम भाग में खड़े थे, हवा और बादलों में तनातनी चल रही थी, मानो दोनों अपना शक्ति प्रदर्शन कर रहे हों। छोटी बड़ी गिलहरियां और खरगोश कूदते हुए बिलकुल समीप आ जाते और पल में कूदते हुए दूर छिप जाते, और वानरों की तो पूछिए ही मत सामने आकर सामान छीनने को तैयार, गाइड ने पहले ही खाने पीने का सामान गाड़ी से न निकालने की चेतावनी दे दी थी। बादल सूरज और हवा तीनों की जुगलबंदी ने मिलकर एक अद्भुत कल्पनालोक बना रखा था और किसी राजकुमारी की मानिंद मेरा मन बादल रूपी घोड़े पर सवार उस अलौकिक कल्पना लोक में विचरण कर रहा था।

तभी फिर से हल्की हल्की फुहार पड़ने लगी जिसमें मैं जानबूझकर भीग गई। ठंडी भीगी भीगी हवा, कुछ ही पलों में दाँत किटकिटाने लगे और गुनगुनी धूप लुका छिपी का खेल खेलती फिर से आ धमकी। अद्भुत मौसम होता है मानसून का और ये हमारा सौभाग्य था कि हम जुलाई के मध्य में वहाँ थे। ये खुशनुमा मौसम हमें आनंदित कर रहा था और हमारी इस यात्रा को सफल बनाने के साथ साथ ही सुखमय भी बना रहा था। मानसून पैलेस के सुखद अनुभव को जीवन में शायद कभी भुला नहीं पाऊंगी।

भारी मन से मैंने महल से बाहर अपनी गाड़ी की ओर रुख किया और मन ही मन वादा किया उस महल की काई लगी बाहरी प्राचीरों से, नक्काशीदार जालियों से, हवा में झूलते झरोखों और खूबसूरत मेहराबों से, विशाल पत्थरों को तराश कर बनाई घुमावदार चौड़ी सीढ़ियों से और वाटिका में खिले रंग-बिरंगे फूलों, वृक्षों और दुर्लभ नील कमल पुष्पों से कि मौका मिलते ही फिर आऊंगी तुमसे मिलने...!

डॉ. टी महादेव राव
विशाखपटनम (आंध्र प्रदेश)
मो. 9394290204

# महान आत्मा से मुलाक़ात

रात के 11.30 बजे हैं। मैं अपनी परेशानियों के साथ विशाखापट्टनम के समुद्र तट पर बैठे झाग सी उठती गिरती लहरों को देख रहा हूँ और उसका गर्जन खामोश शहर के वातावरण में सुन रहा हूँ। अचानक लगा उस सीमेंट से बने चबूतरे पर मेरे साथ कोई बैठा है। देखा तो कोई नहीं, लेकिन साँसों की आवाज लगातार मेरे कानों में पड़ रही है। थोड़ा भयभीत हुआ। कहीं कोई आत्मा, भूत-प्रेत आदि तो नहीं। मैं सोच ही रहा था कि बगल में एक व्यक्ति बैठा दिखाई दिया। अरे! यह तो बिल्कुल बापू, यानी महात्मा गाँधी जैसा लगता है। वह व्यक्ति भी मुझे देखने लगा।

मैंने पूछा "बापू की तरह लग रहे हैं। कौन हैं आप?"

"तरह नहीं, मैं ही हूँ ... मोहनदास करमचंद गाँधी या कहो महात्मा गाँधी या बापू।"

"लेकिन आप इस वक्त यहाँ?"

"हाँ मैं ही हूँ! उधर देखो" उन्होंने सामने की गाँधी प्रतिमा दिखाई, जिसे कुछ लोग पानी से साफ कर रहे थे, कुछ पोंछ रहे थे। मैंने चेहरे पर प्रश्न चिह्न लेकर उनकी ओर देखा।

वे बोले "यह सब इसलिए कर रहे हैं क्योंकि कल मेरी जयंती है न!" तब जाकर मुझे यकीन हुआ कि कि वे सचमुच बापू हैं। मैंने उनके चरण स्पर्श करते हुए कहा "बापू क्षमा करें। पहचान नहीं पाया। आज कल इतने नकली हो गए हैं कि पूछिए मत, इसलिए..... जन्मदिन की बधाई । नमन बापू ! नमन!"

"जीते रहो! लेकिन इतनी रात गए तुम यहाँ क्या कर रहे हो आधी रात होने को है कोई आदमी भी नहीं सड़क पर!"

"मेरी छोड़िए बापू! बस यूं ही। आप बताइए -- आपके जन्मदिन को बड़े जोर शोर से मनाने की तैयारी चल रही है। आपको कैसा लग रहा है?"

"हर साल मनाते हैं मेरी जयंती। पुतले में रहकर सुनता, देखता रहा हूँ।" बड़ी निराशा भरी आवाज़ थी।

"इतने उदास से क्यों है बापू?"

"मेरी जयंती पर फूल मालाओं से मेरी प्रतिमा को भर देते हो। सुबह समूहो में रघुपति राघव राजाराम गाते हुए प्रभात फेरियां निकालते हो, यहाँ तक तो ठीक है, फिर लाउड स्पीकरों पर भारी शोरगुल और फिल्मी गानों का शोर!! मेरी शाँति को न सिर्फ भंग करती हैं बल्कि

सभी को अशाँत और उद्वेलित कर देता है।“

“यह बात तो है बापू! लेकिन आपको जानकर खुशी होगी आपकी जयंती पर मदिरा और माँस का बिकना बंद किया जाता है। सभी शाकाहारी हो जाते हैं और मदिरा से दूर रहते हैं।”

“तुम सिर्फ अखबारों में पढे गए समाचार न सुनाया करो। सच्चाई किससे छिपी है? तुम लोग.... मेरा मतलब है, तुमसे नहीं, लोग मेरी जयंती के दिन क्या करते हैं, मुझे मालूम है। मैंने एक घटना कहीं सुनी या पढ़ी है। आज के जमाने की ही बात है। मेरी जयंती पर एक मंत्री जी ने पौधारोपण किया। भाषण दिया और चल दिए। एक बकरी आई और वह पौधा उसने खा लिया। मंत्री जी के साथी उस बकरी को पकड़ ले गए और मंत्री जी को दोपहर के भोजन में उसी का माँस परोसा गया। ऐसा ही सब करते हो और दो अक्टूबर को बापू की जयंती मनाते हो?” उनकी आवाज में रोष मुझे सुनाई पड़ रहा था।

“मैंने भी सुनी थी यह घटना बापू! उदास मत होइए। आप के समय और आज के समय में काफी बदलाव आ गया है।“

“दिखावा! बस दिखावा !!” अपनी कमर पर बंधी घड़ी पर नजर डालते हुए बोले। उसके बाद रुक कर उन्होंने कहा –“जिस शराब बंदी और माँसाहार बंदी की आज के दिन बात करते हो, उसकी सच्चाई भी कुछ और है।”

वे रुके। हवाइयाँ उड़ते मेरे चेहरे को देख कर फिर बोले–“तुम्हें लगता है कि मुझे यह सब कैसे मालूम? जब दिनभर का हो हल्ला खत्म हो जाता है, मेरी प्रतिमा और बाजू में नेहरू की प्रतिमा के बीच में जो झाड़ियां उगी हुई हैं, उनमें शराबी और कबाबी लोग आते हैं और पीते खाते हुए बातें करते हैं। मुझे पता चल जाता है।“

“क्या बापू!” मैं भी दुखी होने लगा।

“ज्यादा रुपए खर्च करके शराब और माँस की दुकानों में पिछवाड़े से चोरी से खरीदा जाता है। इसे क्या कहगे?”

“हाँ जाँच करने वालों को और ज्यादा जागरूक होकर और भी मुस्तैद होकर इन सब को बंद करना चाहिए।”

“यह क्यों नहीं कहते कि हम में आत्म संयम की कमी है। अधिकारी या कर्मचारी क्यों करें जाँच? और यह तो मन के अंदर से उठनी चाहिए कि हम इन गलत चीजों का इस्तेमाल नहीं करेंगे या जैसा कह रहे हो बापू के जयंती के दिन बिल्कुल नहीं करेंगे। इसे सरकारी नियम कानून क्यों कहते हो? हममें स्वयं को नियंत्रित कर सकने की क्षमता होनी चाहिए। हर चीज पर हमारा संयम काम करे, सरकार नहीं। समझे!”

“जी बापू!” कहते हुए मैं बगले झांकने लगा। फिर अचानक सड़क पर झाड़ू लगाते सफाई कर्मी दिखे। मैंने बातचीत को दूसरी दिशा में मोड़ा – “स्वच्छ भारत अभियान चलाया जा रहा है सारे भारत में। आपने कहा था सफाई ईश्वर की सेवा है और हम सब इस में जुटे हुए हैं, लगे हुए हैं।” इत्मीनान से कह रहा था मैं, लेकिन बापू के चेहरे पर परेशानी की झुर्रियां कम नहीं हुईं।

“अच्छी बात है बेटे! लेकिन इसमें भी कितना किसका समर्पण है, कितनी प्रतिबद्धता है, यह तुम भी जानते हो और मैं भी जानता हूँ। झाड़ू गमला लेकर फोटो खिंचवाना और अखबार में छपवाना अगर स्वच्छ भारत है, तो यह जो दिन-रात, भले ही यह उनकी नौकरी है, सफाई कर्मचारी जो शहर

को सुंदर रखते हैं, उनको इसमें नहीं गिनोगे? उनका काम है करना, हमारा काम है फोटो खिंचवाना झाड़ू के साथ, यही है स्वच्छ भारत अभियान?"

मैं खामोश हो गया। वे रुष्ट दिखे पर उसे हम- अपनी बात पुख्ता ढंग से कहना- कह सकते हैं। थोड़ी शाँति जब उनके चेहरे पर दिखी तो मैंने कहा –"आपको यहाँ देख कर बड़ी खुशी हुई बापू! आपकी मृत्यु के ग्यारह साल बाद पैदा हुआ मैं। आपको फिल्मों में, पुस्तकों में, डॉक्यूमेंट्री में देखता रहा हूँ। आपके दर्शन पर जो गाँधी दर्शन की पुस्तकें हैं, मैंने पढ़ी हैं। यहाँ के गाँधी अध्ययन केंद्र में मैंने पाठ्यक्रम भी पूरा किया है।" वे सुनते रहे और फिर बोले –"अच्छा लगा सुनकर। मैं नहीं कहता कि लोग मुझे भूल गए हैं या मेरे आदर्शों को अनदेखा कर रहे हैं। इतने साल बाद भी केवल स्वार्थ सिद्धि की राजनीति में राजनीतिक दलों द्वारा मुझे और मेरे नाम को घसीटना मुझे कुछ अच्छा नहीं लगता।"

"हर पार्टी आपको अपना कहती है, लेकिन आप ही बताएं आपको किसी भी पार्टी द्वारा क्यों अपना कहा जाता है? जिस तरह ईश्वर की कोई पार्टी नहीं होती, उसी तरह आप जनता के बापू हो, केवल इन राजनीतिज्ञों के नहीं,"

"बिल्कुल सही कहा तुमने। स्वतंत्रता के बाद मैंने कहा था जवाहर से कि आजादी मिल गई है पार्टियों की राजनीति नहीं होनी चाहिए, पर हुआ उसका उल्टा ही। आज देखो भारत में कितनी पार्टियां हैं जो राजनीति के नाम पर घमासान कर रही हैं। जनकल्याण को छोड़कर अपने कल्याण में व्यस्त है।"

"बापू! आपका कहना बिलकुल सही है।" मैं जो भी विषय उठा रहा हूँ, बापू की नाराजगी का शिकार हो रहा हूँ। फिर थोड़ा सम्हालकर कहा " बापू आपके हंसते मुस्कुराते चेहरे को हम लोग हर दिन देखते हैं। हमारा दिन भी अच्छा बीतता है।"

"कहाँ?" अपने पोपले मुंह से हंसते बापू अच्छे लगे, भोले भाले शिशु की तरह। मैंने अपना बटुवा खोला और पाँच सौ और सौ के नोट निकाल कर उन्हें दिखाए। वे गौर से देखकर मुझे वापस करते हुये बोले –"इन नोटों को देखते हो! जितना पाप होता है उसमें यही नोट दिए जा रहे हैं। माँस, मदिरा, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, राजनीतिक उठा-पटक, सत्ता की कुर्सी, गलत प्रचार प्रसार सब में इसी मुद्रा का बोलबाला है।" फिर कुछ रुक कर बोले –"सरकार से कहकर इन नोटों पर मेरा चेहरा छापना बंद करवाना होगा। मन क्षोभ से भर जाता है, जब मेरे चेहरे छपे नोटों का गलत इस्तेमाल किया जाता है।" गंभीर हो वे शाँत हो गए। मैं उद्वेलित होते हुए कहा "क्या बापू! फिर से नोट बंदी करवाएंगे? 2016 में नोटबंदी का बहुत बड़ा खामियाजा हम लोग भुगत चुके। कृपया ऐसा ना करें बापू! हमें क्षमा करें, क्षमा करें!" बापू धीमे कदमों से आगे जाकर ओझल हो गए। अचानक लगा बारिश होने लगी है। देखा पत्नी पानी के छींटे देकर उठा रही है। "बाजार जाना है न? वक्त बेवक्त का सोना अच्छा नहीं। चलिए बाजार चलते हैं।" मैं उठा और आज्ञाकारी पति की तरह उनके पीछे चल पड़ा।

**जयश्री बिरमी**
अहमदाबाद, गुजरात
ईमेल: jbirmiin@gmail.com

# कटी पतंग

एक एहसास लिए मोनू से मिलने गई थी मैं, लेकिन वापस लौटते समय अपने आप को कटी पतंग सी महसूस कर रही थी। अपने ही बोझ से ढह रही थी मैं, क्योंकि प्यार की पतंग को जो हवा का सहारा था वह आज खत्म हो चुका था। गिरते गिरते कहाँ पहुँचाया था प्यार के इस खेल ने? हाँ, खेल ही तो था, जो मोनू ने मेरे साथ खेला था।

जब पहली बार मिले थे, तब मैं उसकी दुकान पर अपने अंतर्वस्त्र खरीदने गई थी और जिस खास तरीके से वह मुझे एक के बाद एक नई डिजाइन दिखा कर उनकी सहूलियतें समझा रहा था, उससे वह एक कलाकार सा लग रहा था। अनायास ही उसकी मीठी बातों ने मेरे मन में उसके लिए कुछ कोमल भावों को जन्म दे दिया था, जो एक नवयुवती के लिए स्वाभाविक था। खरीदी के बाद 6 महीने तक मोनू की दुकान पर जाने का अवसर प्राप्त नहीं होना था, लेकिन उसकी दुकान के सामने से निकलने पर भी दिल की धड़कनें तेज हो जाती थी और उसकी एक झलक पाने के लिए निगाहें तरसती रहती थीं। यह बेकरारी समय के साथ बढ़ती जा रही थी। अब बहाने से, सखियों के साथ, भाभियों के साथ और पहचान वाली महिलाओं के साथ जा कर उसकी दुकान पर मुलाकातों का सिलसिला बढ़ने लगा था। फिर एक दिन उसने भी मेरे प्यार को प्रतिभाव दे ही दिया। उस मुस्कुराहट को कभी भी भूल नहीं पाई थी, मैं। उसके होठों की वह हल्की सी हलचल, जिसने मेरे एहसास को झकझोर दिया था। उसकी आँखों के अनकहे भावों ने मेरे पूरे अस्तित्व को हिला के रख दिया था, उस घटना ने। भाभी के साथ वहाँ से लौट आने पर कई दिनों तक उस मुस्कान और आँखों , दोनों ने मेरे मन को आंदोलित रखा। फिर एकदिन मैं बस की प्रतीक्षा में बस स्टैंड पर खड़ी थी और उसकी बाइक न जाने कहाँ से आकर मेरे सामने खड़ी हो गई। मैं तो अवाक सी उसे देखती रही लेकिन उसकी आवाज सुन मुझे वास्तविकता का एहसास हुआ। वह पूछ रहा था कि वह मुझे मेरे गंतव्य तक छोड़ देगा। मैं बिना कुछ सोचे उसके पीछे बैठ गई और उसने बाइक चला दी। स्वर्ग सा एहसास लिए उस पर पूरा भरोसा लिए मैं जैसे उड़ी जा रही थी। प्यार के हिलोरें लेती, हवा के झूलों में झूलती पतंग की तरह। उसने एक रेस्टोरेंट के पास बाइक खड़ी कर पूछा था कुछ और बिना सुने ही

हामी में सर हिला दिया था मैने। अंदर जा के एक कोने वाली टेबल पर बैठ उसने पूछा था कि मैं क्या लूँगी पर मैंने उसकी पसंद को अपनी पसंद बता दिया और उसने ऑर्डर भी दे दिया। कितनी देर हम वहाँ बैठे, याद नहीं हैं मुझे, बस समय को ठहर जाने की इल्तज़ा करती हुई उसके सानिध्य का आनंद लेती रही। उस स्वप्न से समय को तो पूरा होना ही था, सो हो गया।

मैं घर पहुँच अपनी मस्ती में अपने कमरे में जा उन्ही लम्हों को फिर से जीने की कोशिश करते करते सो गई। माँ को खाना नहीं खाने की सूचना मैने आते ही दे दी थी। बस अब तो मुलाकातों का सिलसिला ऐसा चला कि पूछो ही मत। रोज ही घोड़े पर सवार आते हुए अपने राज कुमार को मिलने परी सी सज कर निकल पड़ती थी। अब तो न कॉलेज की फिक्र थी, न पढ़ाई की। कब साल निकल गया पता ही नहीं चला। इम्तहान हो गए, द्वितीय दर्जे में उत्तीर्ण होने का कोई मलाल नहीं था। अपने प्रथम दर्जे को अपनी प्रीत के लिए कुर्बान कर चुकी थी मैं। लेकिन घर वालों से इस बदलाव को नहीं छुपा सकी थी मैं। एक रविवार जब सभी घर में थे तो माँ ने बात छेड़ दी कि मामीजी के भाई का बेटा बड़ा ही लायक है, एमबीए कर अच्छी नौकरी कर रहा है तो मेरे रिश्ते की बात चलानी चाहिए। पापा, भैया भाभी सभी ने भी हामी भरदी लेकिन मेरी राय पूछना जरूरी नहीं समझा। उन्होंने मामीजी को फोन लगाया और बात आगे बढाने के लिए बोल दिया। मैं मन ही मन कुढ़ती हुई अपने बिस्तर पर जा लेट तो गई लेकिन नींद कोसों दूर थी। अपने प्यार के भविष्य के बारे में सोचती हुई छत पर नजरें टिकाए पड़ी रही थी। अपने प्यार के एहसासों को किसी अजनबी से सांझा करने की बात सोच कर ही बदन में थरथराहट सी आ जाती थी। अपने हमसफर के रूप में जहाँ मोनू को पदानवित किया था वहाँ कैसे किसी और को विराजित कर पाऊंगी, यही प्रश्न बार-बार खाए जा रहा था मुझे। कब सुबह हुई उसका पता ही नहीं चला, लेकिन सारी रात जागते हुए निकलने की वजह से सर दर्द से फटा जा रहा था। बाथरूम जाने लगी तो चक्कर आ गया। दीवार का सहारा ले संभल तो गई लेकिन एक और चीज भी समझ में आ गई कि ये जो हो रहा था उसे सहना बहुत ही मुश्किल होगा। बाथरूम मे अपना चेहरा देख हैरान रह गई, लाल सूजी हुई आँखे और पीला चेहरा, लग रहा था सारी रात रोने में ही

काटी थी मैंने।

फिर 11 बजने के इंतजार में अखबार में मुंह गडाए बैठी रही। कसम हैं अगर अखबार का एक शब्द भी पढ़ा हो। अतीत की यादें एक भावनात्मक असुरक्षा की को जन्म दे रही थीं। समय इतना हौले चल रहा था कि 11 बजाने में युग बिता दिए। मोनू का घर तो देखा नहीं था सिर्फ दुकान ही देखी थी तो वहीं जा के मिलना था। 11 बजते ही बहाने से घर से निकल मोनू की दुकान पर पहुंची तो उसी मुस्कान के साथ मेरा स्वागत किया, लेकिन आज उस मुस्कान के जादू का असर नहीं हुआ था। वह कुछ ग्राहकों के साथ व्यस्त था तो मैं एक और पड़ी कुर्सी पर बैठ गई और उसका काम खत्म होने का बेसब्री से इंतजार करने लगी। जब वे महिलाएं चली गई तो मैं उठके उसके नजदीक गई। उसे भी मेरी हालत देख कर चिंता हुई और पूछ लिया कि क्या हुआ मुझे। जो सब्र का बांध बांधे मैं इतनी देर से बैठी थी वह भरभरा कर टूट गया और मैं फफक फफक कर रोने लगी। मोनू भी थोड़ा घबरा गया। पर जब मैने अपनी शादी के बारे में बताया तो उसे जरा भी धक्का नहीं लगा, सामान्य भाव से बोला कि अगर लड़का अच्छा है तो मुझे रिश्ते को स्वीकार लेना चाहिए। यह सुनकर मेरी हालत तो और खराब हो गई, कैसे कह सकता था ये बात वह, परेशान सी उसकी और डरी हुई हिरनी सी मैं देख रही थी और वह मुझे स्थितप्रज्ञता से देख रहा था। फर्क समझ आया मुझे मेरे प्यार और उसके व्यवहार के बीच का। मैने उसे साल भर के साथ का, मुलाकातों का, इश्क के उन लम्हों का वास्ता दिया तो उसके मुंह से जो शब्द निकले, वह जानलेवा थे। उसने कहा कि उसने कभी भी अपने मुंह से शादी का वादा नहीं किया, ये तो सिर्फ दोस्ती का रिश्ता था। उसके खुद के लिए भी रिश्ते आ रहे थे और एक लड़की उसे पसंद भी आ गई है। उसने 7-8 लड़कियों से मुलाकात भी की थी। ये सब मेरे लिए चौकाने वाली बातें थी। मुझे उसकी बातों के सही मायने समझ आ गए थे। सिर्फ खेल रहा था वह मेरे जज्बातों से और मेरे शरीर से भी। टूटी हुई सी मैं उठी। अपनी गलती की सजा भुगतने के लिए खुद को तैयार कर उसकी दुकान से नीचे उतर गई। ठगा सा महसूस कर रही थी मैं अपने आपको। घर पहुँच ने पर मैंने भी निर्णय ले लिया था कि जैसी भी हो अब मोनू के बिना जिंदगी बितानी ही होगी। शायद इसी में बेहतरी थी, अगर आगे जाके बेवफाई करता तो जिंदगी नर्क बन कर रह जानी थी।

ईश्वर कृपा और बड़ों के आशीर्वाद से मैं बहुत बड़ी बर्बादी से बच गई थी। प्यार का जो फितूर मेरे सर पर था वह उतर गया था। घर आकर मैं नहाने चली गई और अपने तन को मल-मल कर, रगड़ रगड़ कर मैंने उस फरेबी प्यार की छुअन को धो डाला। जब एक घंटे के बाद मैं बाथरूम से निकली तो माँ ने पूछ लिया 'बहुत देर लगी बाथरूम में।' 'बहुत दिनों से चढ़े मैल को धोने में वक्त तो लगता ही हैं न!' माँ कुछ समझी नहीं थी लेकिन सर हिला कर रसोई में चली गई। उस दिन मैं अपने आप को मुक्त महसूस कर रही थी। जब मुझे प्रस्तावित लड़के से मिलने जाना था तो मैं एकदम हल्के मूड में थी। नमन मुझे पसंद भी आया जो एक अच्छे व्यक्तित्व का धनी और संस्कारी भी था। घर आकर मैंने अपनी सहमति माँ को दे दी। कुछ महीनों में शादी कर मैं अपने मनभावन के घर चली आई। कटी पतंग जिम्मेवार हाथों में आकर सुरक्षित हो गई थी।

**योगेंद्र कुमार सक्सेना**
ग्रेटर नोएडा – उत्तर प्रदेश
ईमेल: ykumar55@hotmail.com

# प्रवंचना

साशा अब 28 वर्ष की हो गई थी। वह एक वर्ष से मुंबई की एक सॉफ्टवेयर कंपनी में काम कर रही थी। अब तक उसका जीवन संघर्ष के अलावा कुछ नहीं था। उसके पिता का देहाँत तभी हो गया था जब वह 3 वर्ष की थी। उसकी माँ ने उसका लालन-पालन शिक्षक के रूप में कार्य करते हुए किया था। यह दौर बेहद चुनौती भरा था। साशा चाहती थी कि वह सदैव अपनी माँ के साथ रहे। इसीलिए उसने शादी न करने का फैसला किया। साशा ने अपनी माँ के त्याग को देखा और महसूस किया था। उसने सभी रिश्ते नातों को तार-तार होते देखा था। पिता के बिना एक संतान का लालन पालन कितना चुनौतीपूर्ण होता है यह उसकी माँ से बेहतर कौन समझ सकता था। सुधा ने सारी कठिनाइयों में उसे पढ़ाया लिखाया, एमबीए कराया और उसका भविष्य संवारा था। साशा मुंबई के दो कमरे के एक फ्लैट में रहती थी। यह उसकी कंपनी के मकान थे। यह उसके लिए बहुत बड़ा सहारा था। उसने इससे पहले का जीवन एक कमरे के फ्लैट में गुजारा था इसलिए उसे यह काफी बड़ा और सुविधाजनक लगता था। उसकी माँ की सेवानिवृत्ति में अभी 3 वर्ष थे।

साशा एक संवेदनशील लड़की थी। उसका वेतन भी अच्छा खासा था। अब परेशानियों के धुंधलके उसके जीवन से छंट गए तोउसे लगा कि ऐसे लोगों की मदद करनी चाहिए जिनके पास दो जून की रोटी भी नहीं है। उसने निश्चय किया कि वह अपने वेतन का 10% ऐसे लोगों की मदद पर व्यय करेगी। वह प्रत्येक शनिवार तथा रविवार को खाना बनाकर गरीबों को वितरित करने लगी जिसमें उसे माँ से भी सहयोग मिला। धीरे-धीरे उसकी कॉलोनी के लोग भी उसके इस सेवा कार्य में सहकार देने लगे। अब कुछ स्वयंसेवक भी उसके इस कार्य में मदद करते थे।

एक दिन साशा ने देखा कि एक नवयुवक उसके घर के सामने लैंपपोस्ट के नीचे सुबह आकर बैठता है और कुछ घंटे बिता कर वहाँ से चला जाता है। देखने में किसी अच्छे घर का लगता है लेकिन परेशान हाल दिखाई देता है। एक शनिवार को साशा उसके पास गई और उसे खाना दे आई। उस युवक ने बिना किसी संकोच के खाना ले लिया।

अब साशा उस युवक को प्रत्येक शनिवार तथा रविवार को खाना देने लगी और वह युवक भी बिना किसी संकोच के उसका खाना खाकर वहाँ से चला जाता था। यह क्रम 2 माह तक ऐसे ही चलता रहा। एक दिन साशा ने उस युवक से पूछ लिया – 'क्या नाम है तुम्हारा?' 'कहाँ रहते हो?' 'यहाँ प्रत्येक शनिवार तथा रविवार को क्यों बैठे रहते हो?' 'क्या किसी परेशानी में हो?'

'मेरा नाम विक्रम साराभाई है। इंजीनियर हूँ, या कहूँ कि था। मेरी कंपनी का दिवाला निकल गया। सारे कर्मचारी बेकार हो गए। काम ढूंढ रहा हूँ लेकिन अभी तो सभी कंपनी कर्मचारियों की छंटनी में लगी है। नई नियुक्तियां हो कहाँ रही हैं...? यहीं एक सोसाइटी में फ्लैट लेकर रहता था। किराया न चुका पाने के कारण वह भी छोड़ना पड़ा। दिन में नौकरी ढूंढने की कोशिश करता हूँ। रात को स्टेशन जाकर सो जाता हूँ। भीख माँगने

की हिम्मत नहीं जुटा पाता। आप जब खाना दे जाती हैं तो उसे मैं मना नहीं कर पाता और अब उसकी आदत हो गई है। सप्ताह में 2 दिन का खाना मेरे बाकी के 5 दिन निकाल देता है। मुझे विश्वास है कि मेरे ये दिन भी जरूर बदलेंगे।'

'तुम अपने माता-पिता के पास क्यों नहीं चले जाते?' साशा ने उत्सुकता से पूछा।

'मैं नितांत अकेला हूँ। मेरे माता-पिता नहीं हैं। मुझे उनकी कुछ भी याद नहीं है।' दूर के एक चाचा ने मुझे पाला था, लेकिन वहाँ मेरा जीवन नर्क से भी बदतर था। चाची बहुत मारती थी और मुझसे बहुत काम कराती थी। भागकर मुंबई आ गया। यहाँ जो भी काम मिला, वह किया और पढ़ाई की। मैंने किसी तरह इंजीनियरिंग पूरी कर ली। नौकरी भी लग गई लेकिन अभी दुर्भाग्य ने मेरा पीछा नहीं छोड़ा है। विक्रम ने कहा।

'तुम निराश क्यों होते हो, तुम्हारी नौकरी लग जाएगी।' साशा ने कहा और खाना देकर चली गई।

उस दिन वह विक्रम के विषय में बहुत देर तक ही सोचती रही। उसे विक्रम से सहानुभूति हो गई थी। विक्रम देखने में बहुत आकर्षक था। उसका बात करने का ढंग बहुत प्रभावशाली था। साशा को लगा उसकी मदद करके एक और भलाई का कार्य करेगी। अगले शनिवार को जब वह विक्रम को खाना देने गई तो उसने कहा जब तक तुम्हारी नौकरी नहीं लगती तुम रोज सुबह आ जाया करो। मैं तुम्हारे लिए अलग से खाना बनाकर तुम्हें दे जाऊंगी।

अब साशा रोज विक्रम के लिए खाना देने लगी। अब साशा को विक्रम का इंतजार रहने लगा। वह उसकी ओर आकर्षित होती जा रही थी। जितनी देर वह खाना खाता वह उसके पास खड़ी रहती। एक दिन विक्रम ने उसे बताया कि किसी मल्टीनेशनल कंपनी में उसकी नौकरी लग गई है और अगले इतवार को उसे हैदराबाद जाकर वह कंपनी ज्वाइन करनी है। साशा को यह जान कर खुशी हुई। साशा ने उससे कहा 'वहाँ जाकर अपना पता देना, मेरा फोन नंबर ले लो, संपर्क में रहना' 'आपको कैसे भूल सकता हूँ। आपने मेरा मुसीबत में साथ दिया है। हैदराबाद पहुँच कर, मैं आपसे संपर्क जरूर करूँगा।' विक्रम ने बड़ी आत्मीयता से कहा। सासा विक्रम को अपना विजिटिंग कार्ड देकर ऑफिस चली गई। विक्रम भी वहाँ से रोज की तरह चला गया।

साशा ने इस रविवार को विक्रम के लिए विशेष भोजन बनाया क्योंकि वह हैदराबाद जाने वाला था। उसने उसके लिए टिफिन खरीदा और उसमें इतना खाना रख दिया कि वह तीन बार खा सके। साशा को जहाँ इस बात की खुशी थी कि विक्रम की नौकरी लग गई है, वहीं उसका मन यह सोच कर उदास था कि अब विक्रम से रोज की तरह मिल नहीं पाएगी। एक अजीब सी कशमकश उसके मन में चल रही थी। यह समझ नहीं पा रहे थे कि उसकी हमदर्दी कब विक्रम के प्रति आकर्षण में बदल चुकी थी। उसकी कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था ....। सुबह के 8:30 बज रहे थे। विक्रम इसी समय उसके फ्लैट के सामने आ जाता था और वह खिड़की से देख कर उसे खाना देने चली जाती थी। आज उसने सीधे लैंपपोस्ट के पास जाने का निर्णय लिया। टिफन लेकर जब अपने कॉलोनी के गेट पर पहुंची तो उसने देखा कि तीन-चार मुंबई पुलिस की गाड़ियां आकर विक्रम के पास रकीं और उन्होंने उसे घेर लिया। लगभग 10 जवानों ने उसे धर दबोचा और अपने साथ ले गए। यह सब इतनी जल्दी हुआ साशा न कुछ सोच पाई और न कुछ कर पाई। वह अपने फ्लैट पर लौट आई। उसने खाना वितरण के लिए स्वयं सेवकों को भेज दिया। परेशानी में अपना मन बदलने के लिए उसने टेलीविजन चालू किया तो वह यह समाचार देखकर दंग रह गई कि कुख्यात आतंकी यासिर खान पकड़ा गया है। यह यासिर खान कोई और नहीं विक्रम ही था। साशा ने टीवी बंद कर दिया और गहरी हताशा में सिर पकड़ कर बैठ गई। तभी दरवाजे की घंटी बजी। उसने ड़रते हुए दरवाजा खोला। सामने स्वयंसेवक अनुज खड़ा था – 'दीदी सारे खाने का वितरण करा दिया है।'

रंजीत चौरसिया
फ़ैज़ाबाद/अयोध्या
मो. 9410090195

# मेला

सावन में नागपंचमी से पांचवे दिन, तिथि - दशमी का दिन यानी "आस्तिकन" मेले का दिन आस-पास के गाँवों के लिए खुशी का पैगाम लेकर आया है। अयोध्या से लगभग 28 किलोमीटर दूर, इनायत नगर से कुछ किलोमीटर पूरब में लगता है यह मेला "आस्तिकन"।

ऐसा माना जाता है कि शेषनाग के वंशज 'गहनागन' हैं और गहनाग देव के भाई 'आस्तीक' हैं। बाबा आस्तीक के प्रति यहाँ के लोगों में अटूट श्रद्धा है। इस इलाके में किसी को यदि सर्प ने डस लिया हो तो वह अस्पताल नहीं, गहनान जाना पसंद करता है। यह मान्यता है है कि गहनागन में एक ही बार फेरी करने मात्र से सर्प दंश का जहर उतरने लगता है और आस्तीक बाबा के स्थान पर माथा टेक लेने से भूत वैयम्मर का चक्कर भी खत्म हो जाता है।

आज सुबह से ही गाँव में बहुत चहल-पहल है। सावन की फुहार से धुलकर पत्तियां तरुणा गई हैं। मंद वायु के झकोरे से अपने सिरों को हिला कर वृक्ष की शाखाएं एवं पत्तियाँ मेले जाने वाले बड़े, बूढ़े, बच्चे, जवान सबका स्वागत कर रही हैं। कुछ ने अपनी पुरानी साइकिलों की मरम्मत कराकर मेले की तैयारी कर रखी है, कुछ अपने जूते साफ कर रहे हैं। रंगई काका ने तो अपना कुर्ता 3 दिन पहले से रेह में अच्छी तरह धो कर रखा हुआ है और बनियान पहन कर ही काम चला रहे हैं, वहीं चेहरे की झुर्रियों में सदियां समेटे, सुक्खन दादा में भी मेले प्रति उत्साह उमड़ रहा है।

कुछ दिन पहले इलाके में दहशत फैला गई चेचक ने सुखन दा के परिवार पर तो मानो कहर बरपा दिया था। सबको निगल गई सिर्फ सुक्खन दा और उनका पोता कुलभूषण ही बचे हैं। सुक्खन दा निहायत नेक आदमी हैं। शरीर जर्जर है । किसी तरह से रस्सियां, खाट आदि बुनकर, अरहर के तनों से टोकरियां बनाकर घर का खर्च चलाते हैं।

सुक्खन: देख कुलभूषण! भगवान कितना मददगार है। जेब कई दिनों से खाली थी। चिंता थी कि मेले का प्रबंध कैसे होगा? लेकिन सुबह ही लंबरदार के यहाँ से कई दिनों की अटकी पड़ी मजदूरी मिल गई है। उसमें से तुझे 50 पैसे दे देता हूँ। मेला चले जाना। किसके साथ जाओगे ?

कुल्लू: सोनी, गुड्डू, नौशाद, हेमा और उसकी मम्मी सब जा रहे हैं उन्हीं के संग चला जाऊंगा।

मेला देखने की घड़ी आ गई। सब मेलहरु मेला देखने चल दिए। रास्ते में खुशियां मनाते सभी बूढ़े,बच्चे,जवान चले जा रहे हैं। काफी देर के बाद मेले का रौनक भरा नजारा प्रत्यक्ष दिखने लगा। सर्कस वालों की आवाजें 'जल्दी करो ! जल्दी करो ! शो छूट जाएगा!', आसमान चूमते झूले और चर्खियाँ, बांसुरी वाले की मधुर धुन और मिठाइयों की दुकानें, रंग बिरंगे गुब्बारे सब मिलकर मेले का आकर्षण बढ़ा रहे थे। ये सब बच्चों के मनपसंद सौदे थे।

मेले में एक जगह तीतर ही तीतर दिख रहे हैं जिन्हें उनके मालिक इनामी युद्ध में बाजी

जीतने के लिए लाए हैं। तीतरों का युद्ध देखते ही बनता था, एक दूसरे पर ऐसे टूट पड़ते हैं मानो उनकी चोच नहीं तलवार हो जिससे वे अपने प्रतिद्वंदी को समाप्त कर देने पर आमादा हों। सबने इसका आनंद लिया।

महिलाओं में कोई कान का बाला खरीद रही हैं, कोई नाक की नथुनी, कोई कीली, कोई मंगलसूत्र और कोई गले की जंजीर का मोल-तोल कर रही हैं। तभी एक दुकानदान ने दौड़कर रंगीला के थैले में हाथ डाल दिया जिसमें रंगीला ने चुपके से मंगलसूत्र रख लिया था। रंगीला सफाई देना ही चाहती थी कि दुकानदार ने एक थप्पड़ गाल पर जड़ दिया। रंगीला का तो मानो पानी ही उतर गया। शाम होने में 1 घंटा शेष देख लोग जल्दी-जल्दी खरीद-फरोख्त पूरा करके घर लौटने को आतुर होने लगे। बच्चे अभी अउल मेला देखेंगे! अउल मेला देखेंगे ! कहकर ठुनकने लगे । कुछ नन्हें बच्चों ने अपने हाथों में पिपिहरी थाम रखी हैं, कुछ ने बांसुरी, कुछ ने गुब्बारे और कुछ ने फिरिंगी तो कुछ ने आँखों पर ऐनक लगाए हुए थे। सब खुशी-खुशी मेले से घर की तरफ चल दिए थे।

मेले से लौटते वक्त रास्ते में रंगीला और मंगलसूत्र चोरी की चर्चा होती रही। कोई कह रही है कि अच्छा हुआ उसने पुलिस को नहीं बुलाया, कोई रंगीला के सीधेपन की चर्चा करती तो कोई उसके भोलेपन में छिपी चालाकी की। अंतत: पूरी टीम सकुशल गाँव पहुँच गई।

गाँव पहुँचते ही एक खबर ने गाँव भर में सनसनी फैला दी, जागन की इकलौती दुलारी बेटी मिल्किया, जो मेला देखने गई थी, किसी के साथ भाग गई। जागन की पत्नी का पहले ही देहाँत हो चुका था। किसी ने कहा कि मिल्किया का अफेयर तो कइयों के साथ चल रहा था किंतु इस कार्य को अंजाम किसने दिया? कोई किसी पर शक करता तो कोई किसी पर। धीरे-धीरे यह चर्चाएं भी समय के गर्त में शमित हो गईं। बहुत दिन बीतने पर अचानक मिल्किया बाप के घर पहुंची, तो उसे पिता की समाधि देखने को मिली। उसने आंसुओं की दो बूंदों से अपने किए पर अफसोस प्रकट किया। कोई गाँव वाला उससे बात करने नहीं आया, उसकी गोद में एक बच्चा जो था, जो पड़ोसी गाँव के गैर बिरादरी के राम लगन का बेटा है। घर से भागे हुए उसे 5 वर्ष होने जा रहे हैं।

रामलगन जालंधर में काम करता था। वह अपनी पत्नी और बेटे को छोड़कर पुन: जालंधर चला गया। मिल्की बच्चे के साथ पिता की जागीर पर काबिज रही। एक छोटा सा नया घर बना कर बच्चे की पढ़ाई का प्रबंध करती रही। बच्चा 'सूरज' पढ़ने में बहुत होशियार था। कई दशक बीत गए। अब वह बच्चा अपनी मेहनत और पढ़ाई के बल पर आज एसडीएम बन गया। पूरे इलाके में अपने माँ-बाप का तथा खुद का सम्मान बढ़ा दिया है। मिल्की और रामलगन अब बुड्ढे हो गए हैं। दोनों कुर्सी लगाकर द्वार पर बैठे रहते हैं। उनके अतीत से अंजान रास्ते से आने-जाने वाले लोगों में उनसे नमस्ते करने की होड़ सी लगी रहती है। सावन के मेघ जमकर बरस रहे हैं, आज नाग पंचमी से पांच दिन बाद वाली दशमी तिथि है। कुर्सी पर बैठे-बैठे रामलगन ने मिल्की की आँखों में आँख डालकर देखा, मिल्की भी उन्हें देखकर मुस्कुरा दी। ऐसे लगा मानो आस्तिकन मेले की घटना और उसकी यादें स्मृति पटल पर पुनर्जीवित हो आई हों।

पूनम सुभाष
कौशम्बी,गाजियाबाद-उ.प्र.
मो. 9999845402

# कल्लो

सुधा ने बहुत खुशी से पुकारते हुए बेटे राजीव से कहा ''राजीव बेटा तुम्हारे लिए तुम्हारी मामी ने अपने भतीजी रचना के रिश्ते की बात की है। तुमने रचना को देख तो रखा है बताओ तुम्हें कैसी लगती है। बस थोड़ी सांवली है पर सुना है वजीफा लेकर पूरी पढ़ाई की है और बहुत ही सुघड़ और होशियार भी है। तुम्हें पसंद हो तो बात आगे बढ़ाऊँ'' रचना का नाम सुनते ही राजीव चिढ़ गया और चिल्लाकर बोला ''तुम भी न माँ..... वो कल्लो ही मिली है तुम्हें मेरे लिए। बस अब दुबारा मत पूछना''

'बेटा सूरत ही सब कुछ नहीं होती सीरत बहुत बड़ी चीज होती है। रचना के गुणों के चर्चे तो पूरी रिश्तेदारी में हैं।'

'रहने दो बस' कहकर राजीव घर से बाहर निकल गया।

सुधा अब धर्म संकट में पड़ गई थी कि अपनी प्रिय भाभी को राजीव की न का क्या कारण बताएगी। सोचती है कि शायद राजीव के पिता उसे समझा सकें। मगर दो दिन तक रचना के सर्वगुण की विवेचना के बाद राजीव का वहीं उत्तर रहा ''मुझे नहीं चाहिए सीरत वीरत मुझे तो अच्छी सूरत ही चाहिए जो मेरे साथ उठते बैठते सुंदर दिखे।'' मामले को आगे न बढ़ता देख सुधा ने चुप्पी साध ली और भाभी के पूछने पर कह दिया कि शायद राजीव के दोस्त ने पहले से ही अपनी चचेरी बहन के रिश्ते की बात कर रखी है। हालांकि भाभी सब समझ रही थी।

राजीव को अपनी शक्ल सूरत के साथ साथ अपने चार्टर्ड अकांटेट होने का बहुत घमंड था। अभी इस बात को महीना भी नहीं बीता होगा कि पड़ोस वाले नरेश जी ने अपने अमीर दोस्त मल्होत्रा जी की बेटी के रिश्ते की बात चलाई। मल्होत्रा जी की बेटी सुरभि देखने में बहुत सुंदर थी मगर अमीर बाप की बेटी होने के कारण थोड़ी नकचढ़ी थी फिर भी रूप और धन देखकर सुधा, उसके पति रमेश और राजीव तीनों ही इस रिश्ते के लिए लालायित थे।

राजीव की चट मंगनी पट ब्याह हो गया और खूबसूरत पत्नी पाने के नशे में वह कब अपनी मामी को सभी रिश्तेदारों के बीच रचना के काली होने पर तंज कस गया उसे खुद को भी नहीं पता चला। मामी सारी रस्में निभाकर राजीव के उस कटाक्ष को दिल में लेकर चुपचाप अपने घर चली गई। सुधा को जब पता चला तो उसने भाभी से माफी भी माँगी पर घायल करने वाला कोई और था और माफी माँगने वाला कोई और। इसलिए बात को मन से निकाल नहीं पाई। उसने ठान लिया कि अपनी सर्वगुणा भतीजी के लिए राजीव से कई गुना बेहतर वर ढूंढ कर दम लेगी।

समय बीतता गया राजीव की शादी के लगभग दो वर्ष बाद रचना की भी शादी तय हो गई। राजीव ने उसकी शादी की खबर सुनकर माँ से फिर से कहा 'माँ किसकी किस्मत फूटी है जो उस तवे के साथ फेरे ले रहा है। जरूर खुद भी तवा ही होगा।' अब सुधा से नहीं रहा गया उसके सब्र का बांध टूट गया और चिल्लाकर बोली 'तूने कौन से तीर मार लिए सूरत देखकर, क्या गुण है बता

तेरी सुरभि में। सारा दिन या तो शीशे के आगे, या पार्लरों और पार्टियों में, कभी बाल संवार रही है तो कभी नाखून, तुम्हारी आधी से ज्यादा कमाई तो वो अपने सजने संवारने में उड़ा रही है। दो साल होने को आए रसोई में तो पैर रखकर नहीं देखा। उस पर बाप की अमीरी का घमंड। कम से कम रचना अपने पैरों पर तो खड़ी है। अच्छी पोस्ट पर है उसे मोटी तन्ख्वाह मिलती है। घर के कामों में भी पीछे नहीं हटती उसे कोई कद्रदान ही मिला होगा।' राजीव माँ की डाँट से बौखला गया 'मुझे शादी में जाने के लिए मत कहना अपनी रिश्तेदारी को खुद ही निभाना।'

रचना की शादी के बाद जब भी कभी उसकी चर्चा हुई तो किसी ने भी उसके रंग रूप की नहीं बल्कि गुणों की चर्चा की और पता चला कि रचना का पति अच्छा पैसे वाला बिज़नेसमैन है पर उसने रचना को कभी नौकरी करने से नहीं रोका और उसके उच्च पद का भी पूरा सम्मान करता है। इधर राजीव चार्टर्ड अंकाउटेंट बनकर भी छोटी मोटी प्राईवेट फर्मों में ही काम करते हुए अपना काम चलाता रहा और अपनी खर्चीली और नखरीली बीवी की फरमाइशों को पूरी करने में ही अपनी सारी उर्जा खर्च करता रहा।

समय ने एक बार फिर से करवट ली कोरोना की महामारी ने राजीव की नौकरी छुड़वा दी और राजीव अब नई नौकरी की तलाश में था और मामी ने ही तरस खाकर उसकी सहायता करके रचना के पति की फर्म में ही उसे काम पर लगवा दिया।

एक दिन फर्म का फाउंडेशन दिवस था। इस उपलक्ष्य में भव्य पार्टी का आयोजन किया गया और पूरे स्टाफ को सपरिवार आमंत्रित किया गया। राजीव भी सुरभि को पूरा सजा संवारकर साथ लेकर अपने अहं की तुष्टि के लिए पूरे प्रदर्शन की भावना से वहाँ पहुँचा। लगभग सभी मेहमान आ चुके थे। प्रतीक्षा थी तो फर्म के मालिक और उसकी पत्नी की। राजीव भीतर ही भीतर सोच रहा था कि अभी पैसे और ओहदे की पूरी अकड़ निकल जाएगी जब वह बॉस की पत्नी को देखेंगे जो पूरी कल्लो है।

वह सोच ही रहा तो देखा सभी हॉल के गेट की ओर भागे। कोई विडियो बना रहा था तो कही प्रेस वाले बॉस और उनकी पत्नी से एक मिनट बात करने के लिए अवसर ढूंढ रहे थे। पर यह क्या काले रंग की मर्सडीज़ का दरवाजा खुलते ही एक संभ्रात सी सांवली सलोनी महिला जिसने सलीके से हल्के रंग की सिल्क की साड़ी के साथ गले में हीरों का लॉकेट और कानों में भी हीरे के टॉप्स पहन रखे थे बालों का करीने से बना जूड़ा उसकी सादगी और सौम्यता को और बड़ा रहा था। राजीव को उसके आगे ढेर सारे गहनों में लदी और मेकअप में पुती अपनी सुरभि एकदम फूहड़ दिखाई दी। पूरी पार्टी में किसी ने उस पर ध्यान भी नहीं दिया था।

इन सब बातों के बावजूद वह अपने ओछेपन से बाज नहीं आया। अपने बाकी सहकर्मियों के आगे अपनी छवि को चमकाने के उद्देश्य से यह कहने लगा कि रचना तो उसके परिवार का सदस्य है। वह बड़ी बेबाकी से रचना के पास पहुँचा और अपने स्तर की परवाह किए बिना बोल उठा "अरे रचना कैसी हो भई"

रचना ने, जो अब उसके बॉस के बराबर थी, फुसफुसा कर कहा **'रचना नहीं कल्लो'**

राजीव अपना सा मुँह लेकर रह गया।

**सञ्जय शुक्ल**
राजेंद्र नगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)
संपर्क: 8130438474

# कृष्णद्वैपायन सशंकित

उर्ध्व में दोनों उठा कर बाँह कम्पित
रो रहे हैं कृष्णद्वैपायन सशंकित
किंतु सुनने को नहीं तैयार कोई !

खो चुके हैं चरण चारों सुरभि नन्दन
भूल उत्सव भूमि करती नित्य क्रन्दन
दीनवत्सल सुन न पाते आर्त्त वन्दन
देखकर शव-से पड़े दो पुत्र घायल
धूल में लिपटी पड़ी है भक्ति पागल
टेरती आकर करे उद्धार कोई
किंतु सुनने को नहीं तैयार कोई !

एकलव्यों की खड़ी है भीड़ कुंठित
कर्ण की विद्या हुई फिर आज लुंठित
राजकुँवरों के लिए फिर द्रोण अर्पित
काल लिखता जा रहा ऐसा कथानक
अंत होता है सदा जिस का भयानक
ले धारा पर ईश फिर अवतार कोई
किंतु सुनने को नहीं तैयार कोई !

धुंध का-सा आवरण है दृष्टियों पर
ध्यान किस का आँसुओं की वृष्टियों पर
है कड़ा पहरा सुलगती छातियों पर
वे सभी सोलह कलाएँ दग्ध हैं अब
हाय मनमोहन स्वयं ही स्तब्ध हैं अब
चीखती है द्रौपदी लाचार कोई
किंतु सुनने को नहीं तैयार कोई !

द्यूत के ही रोग से फिर ग्रस्त हैं सब
चक्रव्यूहों के गठन में व्यस्त हैं सब
शान्ति की संभावनाएँ ध्वस्त हैं सब
मोह से होने लगा फिर न्याय बाधित
आ लगे कुरुक्षेत्र में फिर शिविर शापित
ले रहा है रण बड़ा आकर कोई
किंतु सुनने को नहीं तैयार कोई !

उर्ध्व में दोनों उठा कर बाँह कम्पित
रो रहे हैं कृष्णद्वैपायन सशंकित
किंतु सुनने को नहीं तैयार कोई !

जगदीश 'पंकज'
राजेन्द्रनगर,गाज़ियाबाद
मो.8860446774

## चरणबद्ध अवरोध खडे हैं

चरणबद्ध अवरोध खडे हैं
क्या बोलें, कितना मुँह खोलें।
हम कितना अनुकूल कहें जो
नहीं बने प्रतिकूल स्वयम् के
या फिर रहें बजाते ताली
सभागार में नाचें जम के
वे खुश रहें, यही हम सोचें
चाहे अपने नयन भिगोलें !
नंगा नाच कर रहे खुलकर
चौराहों पर जब हुडदंगी
सरकारी नैतिकता गूँगी
बहरी, अंधी या फिर नंगी
नंगेपन की अंगड़ाई पर
संयम रखकर कितना बोलें।
जहाँ अघोषित अनुशासन के
अनुदेशों के विज्ञापन हों
प्रस्तुतियों पर अंकुश लेकर
नये-नये प्रतिबंध सघन हों
वहाँ व्यक्त -अव्यक्त विषय में
चाटुकारिता कितनी घोलें।
शब्द निहत्थे खड़े सामने
फिर भी थरथर काँप रहे हैं
शक्तिमान को किसका डर है
किस आहट को भाँप रहे हैं
तहखानों में छिपी सुरक्षा
हम किस-किसके बल को तोलें।

## यह अच्छा है

यह अच्छा है प्रेम अभी भी पनप रहा है
जब विद्रूप हवा में घृणा, बह रही हर पल।

गगन भेदती हुंकारों की आक्रामकता
शहरों, गावों और ढाणियों तक है फैली
किस-किसका आकलन करे यह समय हमारा
किसकी चादर उजली है किसकी है मैली

यह अच्छा है अभी नहीं सूखा संवेदन
और हृदय की पर्तों में होती है हलचल।

यह आवश्यक नहीं नियति पर सब कुछ छोड़ें
कुछ तो है जिसका दम अब भी घुटा जा रहा
कुछ तो सच है जो बेगानी शादी में भी
दीवाना होकर अब्दुल्ला गीत गा रहा

यह अच्छा है धूप अभी तक बँटी नहीं है
वरना शायद मेरे घर से रहती ओझल।

अभी सिसकियाँ ध्यान खींच लेतीं हैं थोड़ा
हिंसक हाथों में भी कंपन हो जाता है
थोड़ा सा सौहार्द अभी जीवंत खड़ा है
जो पीडित के घावों को भी सहलाता है

यह अच्छा है बूढ़े विश्वासों को लेकर
चिह्नित नहीं अभी तक थोड़ी साँसें निश्छल।

शिवानन्द सिंह 'सहयोगी'
मेरठ- 250001, उ.प्र.
संपर्क- 9412212255

## डूब गईं सड़कें

पता नहीं क्या बात हुई है?
बादल आज पसीज गए हैं,
बरस रहे हैं झम-झम-झम

जल की गहराई कितनी है,
नापे फीता-डोरी,
डूब गईं सड़कें शहरों की,
टूट गई हैं मोरी,
कूड़े का तो पता नहीं है,
कहाँ गए ? इतनी बारिश में,
मौसम है कुछ नम-नम-नम

बिजली की तड़कन की कोई
कहीं नहीं है आहट,
बादल-ऊर्जा-आवेशों में,
कहीं नहीं टकराहट,
बच्चे जल में छपक रहे हैं,
आती है ध्वनि घुँघरू जैसी,
छमक-छमाछम छम-छम-छम

छतरी में से टपक रहा है,
आँसू बनकर पानी,
लगा गई हो चार तमाचा,
ओले की पटरानी,
तली पकौड़ी पड़ी प्लेट में,
बालकनी में ऋण पीता है,
अँगरेजी का रम-रम-रम

## हम शहर से दूर हैं

आधुनिकता का समय है,
किंतु हैं इतने अभागे,
हम शहर से दूर हैं
मटर की छीमी पहेली
बूझती है धूप से,
खींचती है चित्र सरसों
पीतता के रूप से,
हम न घर के,घाट के भी ,
गाँव के बाहर रखा जो,
गोबरों का घूर हैं
छंद की कविता खड़ी है
मुक्तता के द्वार पर,
चंद्रयात्रा मुग्ध होती,
चाँदनी के प्यार पर,
संत कवि तुलसी नहीं हम,
दास कुंभन, ध्रुव, कबीरा,
नहीं मीरां, सूर हैं
ब्याज का पैसा बना जो
मूल, लेता ब्याज है,
ऋण बहुत ही निर्दयी है,
छीलता बस प्याज है,
हम नहीं हैं किलोमीटर,
भूमि का घर नापने का,
एक मानक, धूर हैं
सौरभित उन वाटिकाओं
में लगा भी फल नहीं,
आज तक उलझी समस्या
का मिला है हल नहीं,
भूख की अब द्वारका का,
बंद पट होना न संभव,
व्यवस्थाएँ क्रूर हैं

'विदेह' अरविन्द कुमार
7408403570
arvind.kumar6457@gmail.com

# गोवर्धन-पूजा

दूध की तलाश में
घर से निकला
न सुबह दूध था
न शाम को मिला
सभी दुकानें बन्द थीं/ दूध की
हाँ .....
सभी दुकानें खुली थीं/ शराब की
वहाँ भीड़ भी खूब थी/ नौजवानों की
और चन्द बेढब अधेड़ों की भी
मैंने अनजान की तरह बनकर वहाँ पूछा:
'दूध मिलेगा?'
न सिर्फ विक्रेता
बल्कि सारा का सारा हुजूम हँसने लगा/ सुनकर
'दूध'
'दूध? दूध क्या होता है, जनाब?
दूध कहाँ मिलता है ?....'
मैंने जवाब पेला:
'यही तो सवाल है
मेरा भी, तेरा भी,
किसकी है यह दुकान?
क्या मिलता है यहाँ?'
'यह दुकान शराब की है, ऐ बुड्ढे!'
उनमें से एक बोला
मैंने भी फोड़ दिया एक गोला:
'गोधन पै शराब?
गोवर्धन-पूजा क्या शराब से करते हैं आप लोग?
गाय के थन से क्या शराब टपकती है?
क्यों नाहक ये गोधन की छुट्टी होती है?
जब शराब ही पीनी है तो फिर क्यों लकीर पीटते
हैं लोग?'
मैं अपने बौड़मपने पर खीझता हुआ चलता बना
काल की चाल को मैं भला क्या रोक पाऊँगा!
जय महाकाल! जय क्रूर काल!
जय गोवर्धन-पूजा?

अलका शर्मा
नोएडा-उत्तर प्रदेश

## उर्मिला की पीर

एक तपस्विनी बनकर भोगा, महलों में वनवास
साँसें चलती थीं उसकी पर,रहती सदा उदास

मात सुनयना, तात जनक ने दिया उर्मिला नाम
मिली अग्रजा सीता जैसी, धन्य बनाया धाम
लक्ष्मण गले डाल वरमाला, पाई नई उजास
एक तपस्विनी बनकर भोगा, महलों में वनवास

सिया राम सेवा हित लक्ष्मण, हुए तुरत तैयार
निश्चय किया उर्मिला ने भी, संग चलूँ भरतार
दिया वास्ता सेवा का बस, एक वही थी आस
एक तपस्विनी बनकर भोगा, महलों में वनवास

मेघनाद ने निज तप बल से, पाया था वरदान
चौदह बरस रात दिन जागे, वो ले सकता प्राण
पतिव्रता उर्मिल का ही तप, आया सबको रास
एक तपस्विनी बनकर भोगा, महलों में वनवास

दिया जानकी ने भी था वर,रक्षक होंगे राम
एक देह से एक साथ ही, तीन करोगी काम
आँसू एक नहीं निकला पर, थमी रह गई साँस,
एक तपस्विनी बनकर भोगा, महलों में वनवास

## गज़ल

जीवन को इस तरह से बसर कर रहे हैं हम
ख़ुशियाँ तमाम तुझको नज़र कर रहे हैं हम

डरती हैं आँधियों से जो नन्ही सी कोपलें,
देकर सुकून उनको शज़र कर रहे हैं हम।

जितने भी ज़ुल्म कर सके बेशक करे जहाँ
पुरज़ोर मुख़ालफत तो मगर कर रहे हैं हम

घनघोर अँधेरों की हिमाक़त को देखकर
हर एक रात को ही सहर कर रहे हैं हम

उलझे हुए ख़यालात को हर्फ़ों में सजाकर
लगता है कि गाँवों को शहर कर रहे हैं हम

पॉपुलर मेरठी
मेरठ-उत्तर प्रदेश
मो. 9412704614

# गज़ल

यूँ हवा पर सवार है भइया
आज कल थानेदार है भइया

अब भी बेताज बादशाह हैं हम
बोल कितना उधार है भइया

कैसे वाइज़ नजर मिलायेगा
वो मेरा कर्जदार है भइया

उसने वादा किया था आने का
आज तलक इंतजार है भइया

उस को टुनटुन का आइना कह लो
क्या कहूँ किससे प्यार है भइया

क्या गुजरती है क्या गुजरनी है
शक्ल से आशकार है भइया

जिसको जितने पडें यहाँ जूते
उसका उतना वकार है भइया

आजकल तो हर इक नेता पर
इलेक्शन सवार है भइया

तीस दिन बाद जाके उतरेगा
इंतखाबी बुखार है भइया

शहर में कितनी कद्र है मेरी
हर तरफ घेर-घार है भइया

बाद पिटने के क्यूँ है फरियादी
मार पीछे पुकार है भइया

पॉपुलर यानी हज़ल गो शायर

डॉ. ब्रजराज यादव
गुलावठी-बुलंदशहर-उ.प्र.
मो. 9690077683

# रेपिस्ट आँखें

दीवार के इस ओर
खेलती है छोटी बालिका
अपनी गुडिया के साथ
सजाती है संवारती है
और बसाली है एक
दुनिया नवीन
पास बैठा एक बालक
हो उठता है उग्र
छीना झपटी में
नोंच ही लेता है
गुडिया के बाल
रोती बालिका
भीगी आँखों से
उठाती है गुडिया
हो जाती है तल्लीन
फिर से सजाती है
संवारती है ... दुनिया..
बरसों के बाद
दीवार के उस ओर
पड़ी गुडिया विक्रत वसना
चीखता है अंतस
बालिका !
कहाँ हो तुम
बालिका खेल रही है
घर के आँगन में
शिक्षा के प्राँगण में
कर रही है कार्य
खेत में, देश में
दफ्तर अशेष में
सरे राह एकांत में
पग पर रथ पर
जा रही है पथ पर
सुनो दीवार!
तुम्हारे ही सुपुर्द बचपन
और यह यौवन संभार
न्याय विधान और सुरक्षा
तुम्हारी ही संपूर्ण व्यवस्था
है कोई पहर, दिवस-रातें
सुरक्षित रहें स्वप्न साँसें
सर्वत्र लगी हैं रेपिस्ट आँखें

## वक्त के आइने में

वक्त के आइने में यूँ बदल गए हैं लोग
चेहरे से अब नजर नहीं मिलती
बहुत मिलते हैं उसके खत लेकिन
कभी आने की खबर नहीं मिलती
मधु की तलाश में भटकते रहे उम्र भर
ख्वाबों की कहीं दहर नहीं मिलती
उतर कर जिसमें डूबना चाहते हैं सब
आँखें के समंदर में वो लहर नहीं मिलती
यकीं इतना कि गिरने न दोगे कभी
किसी दर पर ऐसी महर नहीं मिलती
बरसों से सूख रहा है उम्मीद का जंगल
रेत के पर्वत पर कोई नहर नहीं मिलती

मुकेश निर्विकार
बुलन्दशहर (उ0प्र0)
मो.9411806433

# ईमान का कछुआ

ईमान का कछुआ
पहुँचा, बेशक
सबसे बाद में
लेकिन
सिर्फ एक वही है
जो जान सका है
मंजिल का तमाम रास्ता
और रास्ते की ऊँच-नीच भी।

उसी ने जाने हैं
फूलों में छुपे
कांटों के दंश
उसी ने सही है
रेत में गड़े
गोखरूओं की चुभन
उसी ने छोड़ी है
अपने पद-चिह्नों की
अविरल लकीर...

छलांग लगाकर
पहले पहुचे खरगोश
आज भी अनजान हैं
रास्तों से
अछूती रह गईं हैं उनसे
रास्तों की तमाम दुश्वारियां
नितान्त रिक्त पड़े हैं
अनुभव के उनके कोठार
मंजिलें पाकर भी
सहम गयीं हैं
फरेबी छलांगें उनकी

सीख नहीं सके हैं वे
संतुष्टि के सरोवर में
कछुए-सा तैरना
कहने को वह रेस जीत चुके हैं!

**एम एम खान**
कोटा-राजस्थान
मो. 9414569391


# मंज़िल अपने राही से

केवल कहने से क्या होगा करके दिखलाओ यार ज़रा
वरना ये बातें ही बातें अब लगती है बेकार ज़रा
इस दिल के रोगी को कब तक यूँ बातों से बहलाओगे
वादे तो अब तक खूब रहे खुशियाँ भी अपनी वार ज़रा
उखड़ी उखड़ी सी सांसें हैं बेचैन सी सूरत लगती है
थी आस मिलन की तो खुद को भी कर लेते तैयार ज़रा
क्यूं चांद से मुखड़े पर तेरे वो पहली सी मुस्कान नहीं
दुःख ने आ घेरा है तुमको या लगते हो बीमार ज़रा
ऐसे बिछड़े कि बस्ती भी अब सूनी सूनी लगती है
आकर ये भोली सी सूरत तुम दिखलाते एक बार ज़रा
ये बगिया भी मेरे दिल की फूलों सी महकने लग जाती
चौखट पै आकर तो देते तुम दस्तक ही इक बार ज़रा
इक लक्ष्य बनाकर आगे बढ़ हर पल का सदउपयोग भी कर
जब तक न मिले तो चैन न ले उस दर्द से हो दो चार ज़रा
कितना भी विपरित मौसम हो चूमेगी सफलता चरणों को
हाँ सच्ची लगन और साहस से आलस को अपने मार ज़रा
जब अपने पराये का अंतर मन से मिट जाया करता है
आनंद उसी जीवन में है जी कर तो देखो यार ज़रा
ये कठिनाई के पर्वत सब रेती के कणों से बिखरेंगे
अपने फ़ौलादी हाथों को करके देखो हथियार ज़रा

विजय कनौजिया
काही, अम्बेडकर नगर (उप्र)
मो0-9818884701

श्याम सुन्दर श्रीवास्तव 'कोमल'
लहार-भिण्ड, (म०प्र०)
मो०- 8839010923

## गीत प्रेम के कैसे लिख दूँ

गीत प्रेम के कैसे लिख दूँ
ऐसे अब हालात नहीं
भला अकेला कैसे हंस लूँ
जब तुम मेरे पास नहीं..।।

कितनी ऋतुएं चली गईं
अपने संग यादों को लेकर
जिस सावन में अब मैं भीगूं
ऐसी अब बरसात नहीं..।।

सपनों के सब बाग बगीचे
मुरझाये से दिखते हैं
हरे भरे हो जाएं फिर ये
ऐसी तो कुछ बात नहीं..।।

अरमानों के बिस्तर पर
अब नींद बड़ी मुश्किल से है
जिस तकिये पर सिर रखता था
अब ओ मेरे साथ नहीं..।।

गुज़रा वक़्त कहाँ आता है
दस्तक देने चौखट पर
मन ढांढस देता है मन को
अब करता उत्पात नहीं..।।

## स्मृतियों के इंद्रधनुष

कभी-कभी इन आँखों में जब
बीते दृश्य उभर आते हैं।

जिनके आने से यह जीवन,
सरस राग मय हो जाता है।
घुल जाते हैं सप्त रंग रस,
इंद्रधनुष सा बन जाता है।
खिल जाता माधुमास हृदय में,
स्वप्न सुरभि सी बिखराते हैं।

स्मृतियों की आहट सुनकर,
मन में उथल पुथल होती है।
जग जातीं अनगिन इच्छाएं,
आँखों  से झरते मोती हैं।
एक चुभन मीठी सी मन को,
यादों के क्षण दे जाते हैं।

मन के इस आँगन में यादों
की खुलती अनमोल पिटारी।
खिड़की, द्वार, झरोखे, छज्जे,
बालकनी, छत और अटारी।
आँखों  में सजीव हो उठते,
विगत कथाएं दुहराते हैं।
कभी-कभी इन आँखों में जब,
बीते दृश्य उभर आतें हैं।।

रमेश प्रसून
बुलन्दशहर -203001(उप्र)
मोबाइल नं 9259269007

## गज़ल

दरकी है सोच जबसे लाचार हो गये हैं
लगता है लोग जैसे बीमार हो गये हैं

छत को बता रही हैं ईंटें उधड़-उधड़ कर
बच, घर के टूटने के आसार हो गये हैं

बाज़ार क्या करेगा बाज़ार में खड़े हम
बिकने को ख़ुद-ब-ख़ुद जब तैयार हो गये हैं

गमलों में ढूँढते हैं अब वे वज़ूद अपना
छोटी नज़र के जबसे अशज़ार हो गये हैं

बद की मुंडेर पर आ रुकने लगा है सूरज
ये इसलिए उजाले बदकार हो गये हैं

इस ज़िस्म से निकल कर इस ज़िस्म के ही हिस्से
कुछ सोच! ज़िस्म के क्यों गद्दार हो गये हैं

सच्चाई कहते -कहते यह क्या हुआ उन्हें जो
अब झूठ के शिगूफ़े दरकार हो गये हैं

आख़िर निकाल लेगा कुछ हल 'प्रसून' इनका
जो मस्अले उलझ कर दुश्वार हो गये हैं

## गज़ल

साँझ अब ढलने लगी कुछ कीजिए
रोशनी गलने लगी कुछ कीजिए

पाँव में छाले न पड़ जाएं कहीं
चाँदनी जलने लगी कुछ कीजिए

आग बोई थी तो अंगारे उगे
फ़स्ल अब फलने लगी कुछ कीजिए

धूप अपनी छाँव छिनती देख कर
हाथ फिर मलने लगी कुछ कीजिए
चक्रवातों के बुलावे पर उधर
यह हवा चलने लगी कुछ कीजिए

बिन बिवाई पाँव की एड़ी मेरी
राह को खलने लगी कुछ कीजिए

फिर अचानक स्वप्नदृष्टा आँख में
पीर-सी पलने लगी कुछ कीजिए

प्रगीत कुंअर
सिड़नी- ऑस्ट्रेलिया

## गज़ल 1

हमें फिर से बनाया जा रहा है
पुराने को मिटाया जा रहा है

किनारे रख हमारी ख़ूबियों को
बुराई को दिखाया जा रहा है

जो हमने चोट खायीं हैं अभी तक
उन्हें सब से छिपाया जा रहा है

हमारा दर्द ही सुनता ना कोई
हमें लेकिन सुनाया जा रहा है

भले टूटे हो फिर भी बोलना मत
हमें अब ये सिखाया जा रहा है

## गज़ल 2.

ये माना कोशिशें अक्सर कई नाकाम होती हैं
नहीं मालूम कब कोशिश वही वरदान होती हैं

कभी ऊँचाईयों पे जा के तुम पत्थर ना बन जाना
बिखरकर टूटती हैं गिर के जो चट्टान होती हैं

जो निकले दिन तो उन गलियों में रौनक़ ख़ूब होती है
मगर जब शाम हो वो ही गली वीरान होती हैं

जो बातें भूलते ही जा रहे हम ख़ुद के ही घर में
वही परदेस में अपनी सही पहचान होती हैं

हवाएँ जो खुले मौसम में तो चुपचाप चलती हैं
मगर बदले जो मौसम तो वही तूफ़ान होती हैं

डॉ० भावना कुँअर
सिडनी, ऑस्ट्रेलिया

## गज़ल 1

बिन मिले उनसे गुज़ारा नहीं होने वाला।
दिल के ज़ख़्मों का मुदावा* नहीं होने वाला।

मिल के कुछ तो यहाँ करना ही पड़ेगा हमको।
ख़ाली बातों से उजाला नहीं होने वाला।

करके वादे वो मुकरता ही रहा है अक्सर
उसके वादों पे भरोसा नहीं होने वाला।।

कोई तन्हाई में क्यूँ ऐसे पुकारे तुझको।
तू किसी का भी सहारा नहीं होने वाला ।।

तूने इल्ज़ाम दिए इतने कि लगता है यूँ ।
अब मेरे साथ ज़माना नहीं होने वाला ।।

घर में बैठे हैं अभी बंद अंधेरों में सभी।
ये न सोचें कि सवेरा नहीं होने वाला।।

आसमाँ में हों भले लाखों ही तारे लेकिन।
कोई भी मेरा सितारा नहीं होने वाला।।

## गज़ल 2

उसके दिल में प्यार की भी जोत जलनी चाहिए
है जो एक़ पत्थर की मूरत वो पिघलनी चाहिए

ऐसी मुश्किल आ पड़ी है जिससे दम घुटने लगा
कुछ भी हो, कैसे भी हो, मुश्किल ये टलनी चाहिए

थक गया सूरज बहुत दिनभर की भागम भाग से
रात थी हमदर्द, बोली शाम ढलनी चाहिए

दर्द, आँसू, भूख से जो, हो गए बेकल यहाँ
ज़िंदगी उनकी सुकूँ से, भी तो चलनी चाहिए

बाज का पंज़ा लिए बैठे हुए हैं घात में
चाल चिड़ियाओं को भी, अपनी बदलनी चाहिए

उड़ते पंछी पर निशाने जो लगाते शौक में
उनके मन में भी तो ममता थोड़ी पलनी चाहिए

डॉ सिराज गुलावठवी
गुलावठी, बुलंदशहर-उ.प्र.
मो. 9927254040

डॉ. इन्द्र कुमार शर्मा 'आदित्य'
राजेन्द्र नगर, गाजियाबाद
मो. 9376909647

## गज़ल

छिड़कते तेल हैं अपने घरों पर।
जुनूं ऐसा है अब के सर फिरों पर।।

है तकिया जिनका ख़ुद ही दूसरों पर।
हो क्यूँ दस्तारे मिल्लत उन सरों पर।।

हैं ख़ाली ख़िदमते ख़लक़े खुदा से।
सियासत उन की मस्जिद मंदिरों तक।।

कोई हव्वा की बेटी नंगे सर है।
मगर चढ़ती है चादर मक़बरों पर।।

परिंदे छूते हैं वो आस्मां को।
भरोसा है जिन्हें अपने परों पर।।

उसी के सामने झुकती है दुनिया।
रखे दुनिया जो अपनी ठोकरों पर।।

जो देखो दिल की आँखों से इन्हें तुम।
उभर आते हैं चहरे पत्थरों पर।।

नये फ़ितने जगाते हैं ये हर दिन।
भरोसा यूं नहीं है रहबरों पर।।

सिराज अब तक है सोई क़ौम मेरी।
कि ख़तरा आ गया है अब सरों पर।।

## भाषा

मेरी तुम्हारी पीढ़ियों के
ज्ञान का आधार भाषा
है सृजन के मूल में ज्यों
सृष्टि का दातार दाता
शब्द की पहचान भाषा
शब्द का भंडार भाषा

ध्वनियों की मोती पकड़कर
शब्द के धागे में भरकर
कर रही है उन्नति निज
भावों का व्यापार भाषा
जो भी समझा चेतना ने
कर रही साकार भाषा

मेरी तुम्हारी पीढ़ियों के
ज्ञान का आधार भाषा

डॉ. केशव कल्पांत
बुलंदशहर-उ.प्र.
मो. 6396789646

# एक प्रश्न

एक प्रश्न
सामने खड़ा होकर
मुझसे एक प्रश्न पूछ रहा है।
मेरी बुद्धि की परीक्षा ले रहा है।।
बतलाओ, यह हमको समझाओ
जब श्री राम ने लंका पर चढ़ाई के लिए एक सेना बनाई।
उस सेना में वानर, रीक्ष और भालुओं की भीड़ जुटाई।।
पर मानव सैनिकों की भर्ती उस में क्यूँ नहीं कराई।
इसके पीछे क्या रहस्य था मेरे भाई।
ये बात हमारी समझ में नहीं आई।।

इसके उत्तर में एक तर्क भरी आवाज आई।।
श्री राम एक दूरदर्शी सेना नायक थे।
वे मानव की फितरत को पहचानते थे।
मनुष्य की गतिविधियों को अच्छी तरह जानते थे।
उन्हें पूर्ण विश्वास था,
लालची मानव सैनिक लंका में युद्ध नही लड़ पाते।
मौका पाकर लंका का सोना लेकर रफू चक्कर हो जाते।
युद्ध के मैदान से मुँह छिपा कर भाग जाते
और श्री राम युद्ध जीतने के बजाय युद्ध हार जाते।
तब रामायण के सभी कथानक भी बदल जाते।

ऋषभ शुक्ला
पुवायाँ, शाहजहाँपुर
मोबाइल : 8299455767

# स्वार्थ के पदचिह्न

अच्छा होता है
कभी कभी
विचारों का
शून्य हो जाना
क्योंकि तब
शाँत  हो जाती है
भावनाओं की
उथल-पुथल
मौन हो जाती हैं
सम्वेदनाएँ
थम जाता है
आँसुओं का प्रवाह
रिक्त हो जाता है
हृदय का पटल
छूट जाता है
आलोचना का भय
और
निर्दोष हो जाता है
अपराधी मन
परन्तु...
उन क्षणों
मानवता से विरक्त
स्वयं को समर्पित
'हम'
करते हैं
जिन पदचिह्नों का
अनुसरण
वही कहलाते हैं
"स्वार्थ के पदचिह्न"

डॉ. जितेंद्र,
मेरठ-उत्तर प्रदेश
ईमेल : jksirsa2@gmail.com

# गीत लिखूँ मैं

तुम कहते हो गीत लिखूँ मैं।
उनमें भीगी प्रीति लिखूँ मैं।
भोर लालिमा स्वर्णिम संध्या,
शुभ्र चाँदनी रीति लिखूँ मैं।।

देख जगत की सारी पीड़ा।
कैसे लिख दूँ उसको क्रीड़ा।
हाथ हृदय के साथ खड़ा है,
किस विधि रसमय गीत लिखूँ मैं।।

तान छेड़कर मीठी वाली।
चाह रहे तुम बात निराली।
व्यंजन में भी भरूँ व्यंजना,
स्वर-स्वर में संगीत लिखूँ मैं।।

तप्त भूमि की सिक्त कहानी।
कैसे लिख दूँ बरसा पानी।
दहक रहे जो अंगारे हैं,
उनको कैसे शीत लिखूँ मैं।।

नयनो से नयनो की फाँसें।
श्वासों में घुलती जब श्वासें।
कहते हो तुम पकड़ कलम को,
अंग-अंग मनमीत लिखूँ मैं।।

एक घरौंदा धरती सबका।
उजड़ रहा है देखो कबका।
हारी बाजी मानवता की ,
उसको कैसे जीत लिखूँ मैं।।

कम्पन से कम्पन टकराते।
गीत रसिक जो रसमय गाते।
उर्मिल कोमल तन-मन डूबे,
शब्द-शब्द नवनीत लिखूँ मैं।।

देख रहा हूँ निर्मम दुनिया।
आस्थाओं की विकृत गुनिया।
भरा हुआ है रोष हृदय में,
कैसे अब मधु गीत लिखूँ मैं।।

डॉ. सुरेन्द्र दत्त सेमल्टी
देहरादून (उत्तराखंड)
मो. 9690450659


## शरद ऋतु का उल्लास

सितम्बर - अक्टूबर के जो महीने,
मत पूछो जी इनका क्या कहने!
शरद की मनमोहक छटा निराली,
नभ-धरती सब दिखती मतवाली !
रहती सर्दी - गर्मी दोनों ही सम ,
न जादा और न रहती कोई कम ।
सोलह तिथियाँ पितृ पक्ष की जो ,
पित्रों को समर्पित सब होती ओ ।
शारदीय नवरात्र फिर हैं आते ,
माँ भगवती को सब घर हैं बुलाते ।
घर-मन्दिरों मे देवी का पूजा-पाठ ,
भजन-जगराते-हरियाली के साथ ।
शुक्ल पक्ष की सुंदर चाँदनी रातें ,
चाँद - सितारों से करवाती बातें !
मोहित होता चाँद पर पक्षी चकोर ,
एक टक निहारता रहता उस ओर !
चन्द्रमा का शीतल - शुभ्र प्रकाश ,
हर प्राणी को खूब आता है रास ।
दिन मे दिनकर जी ताप बर्षाते ,
फूलों पर भ्रमर मिल गुनगुनाते ।
देती शरद ऋतु हर पल आनन्द ,
खग-तितली-पशु दिखते स्वछन्द ।




मृत्युंजय साधक
गोविंदपुरम गाजियाबाद
मोबाइल ....9891375604


## गज़ल

चुप्पियाँ तोड़ने को मना ले कोई
आज बीड़ा ये ऐसा उठा ले कोई

हर तरफ धूल है आंधियाँ चल रहीं
ज्योति संकल्प की अब बचा ले कोई

जिसमें आँसू न तड़पन न हों सिसकियाँ
एक ऐसी ही बस्ती बसा ले कोई

ये हदें हैं मेरी ये हदें हैं तेरी
बाँटने की ये शर्तें हटा ले कोई

'साधकों' की तरह जोड़ता है जो बस
भाव दिल से दिलों तक जगा ले कोई

डॉ. देवकीनंदन शर्मा
गुलावठी-बुलंदशहर-उ.प्र.
मो. 9837573250

# बुकर का आना.....

भयंकर गर्मी से तपते भारत में पिछले दिनों लन्दन से ठंडी हवा का एक झोंका आया..... हिन्दी की प्रतिष्ठित कथाकार गीतांजलि श्री के उपन्यास 'रेत समाधि' के अंग्रेजी अनुवाद 'टूंब आफ सैंड' को अन्तर्राष्ट्रीय बुकर पुरस्कार से सम्मानित किया गया ...

दरअसल गीतांजलि श्री पहली भारतीय हिन्दी लेखिका हैं, जिन्हें यह गौरवपूर्ण सम्मान मिला है। हम इस सत्य को भी नहीं नकार सकते कि इस उपलब्धि का श्रेय अमेरिकी अनुवादक डेजी राकवेल को भी जाता है, जिन्होंने पूरे मर्म के साथ 'रेत समाधि' को सफलतापूर्वक अंग्रेजी में अनूदित किया।

कितना अच्छा होता कि 'रेत समाधि' को स्वतंत्र रूप से यह सम्मान मिलता; पर हमें उदास या हताश होने की आवश्यकता नहीं है; क्योंकि यह एक अच्छी शुरुआत है। इससे हिन्दी साहित्य की मौजूदा स्थिति पर विमर्श के बन्द गवाक्ष खुलेंगे और उस साहित्यिक राजनीति पर भी अंकुश लगेगा जो तय करती है कि हमें क्या पढना चाहिए?

गीतांजलि श्री इससे पहले भी 'माई', 'हमारा शहर' और 'तिरोहित' जैसी कथा-कृतियों से सुधी पाठकों का ध्यानाकर्षण करती रही हैं। उनके सृजन -कैनवास पर कस्बे के देशज रंगों से लेकर वैश्विक सरोकारों के चित्र स्पष्ट दिखाई पडते हैं। स्त्री नियति, साम्प्रदायिक मनोदशा और आतंकवाद जैसे मुद्दों पर उन्होंने निर्भीकता से कलम चलाई है ।

'रेत समाधि' का ताना-बाना माँ- बेटी के बहनापे की जमीन पर बुना गया है। उत्तर भारत की 80 वर्षीया दादी का मन दुनिया से उचट जाता है। जीने की इच्छा दादी को परिवार की ओर वापस खींच लाती है। प्रेम, क्रोध, आपसी नोंक-झोंक में दादी की जिद 'नहीं उठूँगी','अब तो नहीं ही उठूँगी' नई जिन्दगी में वापस लौटा लाती है। अब वह अतीत की अधूरी इच्छाओं को पूरा करती है। बेटी के साथ अपने प्रेमी को खोजती है। बेटी की भी अपनी आकाँक्षाजनित कुंठाएँ हैं, जो उन्हें सखी बना देती हैं। कथा के इसी अप्रत्याशित मोड़ पर गीतांजलि श्री एक साधारण स्त्री को असाधारण बनने की महागाथा को 'रेत समाधि' नाम देती हैं।

यूँ तो अधूरी इच्छाओं को दफन करना, फिर वक़्त की आँधी द्वारा उन्हें पुनर्जीवित कर देना ही दो ध्रुव प्रतीत होते हैं 'रेत समाधि' के; मगर बुकर सम्मान से विभूषित यह कथाकृति धर्म, परम्परा, परिवार, समाज और देश की सरहदों का अतिक्रमण करते हुए वैश्विक स्तर पर एक मौलिक मुहावरा गढती है। यही कारण है कि बुकर पुरस्कार ज्यूरी ने,'रेत समाधि' को भारत का बेहतरीन उपन्यास बताया है ।

अस्तु, 'रेत समाधि' को बुकर पुरस्कार मिलना अनेक अर्थों में महत्वपूर्ण है। कथाकार गीतांजलि श्री की उत्कृष्ट प्रस्तुति के सम्मान के साथ इस उपलब्धि ने भारतीय भाषाओं की तरफ एक नई खिड़की खोल दी है जिससे बाह्य दुनिया हमारे समाज, साहित्य और संस्कृति को और बेहतर ढग से समझ सकेगी।

आइए, कथाकार गीतांजलि श्री और अनुवादक डैजी राकवेल का अभिनन्दन-वन्दन करें... और हिन्दी साहित्य की इस शानदार वैश्विक आहट के कदमों को चूमें.....

**डॉ. राम विचार यादव**
ठाणे (पश्चिम) 400610 (महाराष्ट्र)
मो. 9869442547

# हिन्दी प्रयोग की दिशा में मील का पत्थर

राजभाषा के क्षेत्र में तीन दशक से भी अधिक के अनुभव के आधार पर मैंने जब उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा पुरस्कृत डॉ. ईश्वर सिंह की पुस्तक 'हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध' पढ़ी तो राजभाषा ज्ञान के साथ-साथ मानसिक अवरोध की तमाम गाँठें खुलती चली गईं।

राजभाषा कार्यान्वयन के बारे में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के तत्कालीन संयुक्त सचिव-राजभाषा डॉ. विपिन बिहारी का संदेश अपने आप में पर्याप्त है जहाँ वे कहते हैं - 'यह एक सत्य है कि कुछ लोग अंग्रेजी बोलने और अंग्रेजी में काम करने में गौरव अनुभव करते हैं। ऐसे लोग हिंदी को अंग्रेजी की तुलना में कम महत्व देते हैं। यही 'हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध' पुस्तक की विषय-वस्तु है। हिंदी और मराठी के जाने-माने कवि, लेखक एवं साहित्यकार डॉ. दामोदर खड़से और महाराष्ट्र राज्य हिंदी अकादमी के तत्कालीन कार्याध्यक्ष डॉ. शीतला प्रसाद दुबे ने भूमिका लिखी है जिससे पुस्तक सारगर्भित बन पड़ी है।

डेढ़ सौ से भी अधिक पृष्ठों और 25 अध्यायों में विभक्त इस पुस्तक में आम जन-जीवन में हिंदी के प्रयोग, राजभाषा के रूप में सरकारी कार्यालयों में इसके उपयोग और राष्ट्रभाषा के रूप में जन चेतना को लेकर व्याप्त तमाम अवरोधों पर लेखक ने अपनी कलम चलाई है। प्रस्तुत पुस्तक में हमारे जीवन में भाषा का महत्व, हमारे रिश्तों, हमारी खुशियों, संस्कृति और दृष्टिकोण जैसे अनेकानेक विषयों पर मानसिक अवरोधों की बखूबी चर्चा की गई है। इससे न केवल राजभाषा के क्षेत्र में, वरन रोजमर्रा के जीवन में भी पुस्तक की उपादेयता प्रकट होती है। लेखक कहते हैं कि 'शब्द ब्रह्मास्त्र की तरह है, यदि वह चूक गया तो गलत जगह पर वार करेगा। यदि उसका निशाना सही जगह पर रहेगा तो सही जगह पर वार करेगा'।

आज हम देखते हैं कि हमारे बोलने मात्र से भी हमारे संबंधों पर अनुकूल अथवा प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। भाषा और संस्कृति के प्रभाव को लेखक ने बखूबी समझाया है। विदेशी भाषा किस प्रकार से हमारी संस्कृति को विकृत करती है इसका उदाहरण हमारी युवा पीढ़ी द्वारा हमारे पौराणिक पात्रों के नामों के उच्चारण में भी देखा जा सकता है। आज हमारे संबोधनों, रिश्तों और रीति-रिवाजों से हमारी संस्कृति प्रभावित हो रही है। इसका उदाहरण देकर इनके कारण और निवारण पर भी लेखक ने अपना मत व्यक्त किया है। 'त्रुटियों की आशंका' का अवरोध अध्याय में लेखक ने बताया है कि हम अंग्रेजी में भी बहुत हास्यास्पद गलतियां करते हैं, परंतु हिंदी सीखने और बोलने से परहेज करते हैं। सरकारी कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग में यह सबसे बड़ा अवरोध है। 'दूसरों की राय का अवरोध' भी बड़ा अवरोध है। 'सबसे बड़ा रोग, क्या कहेंगे लोग'।

अति शुद्धतावादी माँग का अवरोध हिंदी की प्रगति में बड़ी बाधा है। आज खड़ी बोली हिंदी केवल इसलिए विस्तार पा रही है क्योंकि उसने अंग्रेजी, संस्कृत और अन्य भारतीय भाषाओं के तमाम प्रचलित शब्दों को

अपनाया है। अंग्रेजी के विस्तार का कारण ही यही है कि अंग्रेज जहाँ गए, उन्होंने वहाँ के शब्दों को अपनी भाषा में स्थान दिया। अति शुद्धतावादी अवरोध का एक सुंदर उदाहरण पुस्तक के पृष्ठ 96 पर पढ़ने को मिलेगा जहाँ लेखक ने हिंदी का उपहास उड़ाने वाला एक संवाद उद्धृत किया है। यह अति शुद्धतावादी दृष्टिकोण पर एक व्यंग्यात्मक प्रहार है।

आज हिंदी को अंग्रेजी से ही नहीं अपितु अपनी क्षेत्रीय भाषाओं से भी विरोध का सामना करना पड़ रहा है। लेखक ने व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हुए राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका का वर्णन किया है और कहा है कि हिंदी राष्ट्रीय एकीकरण का महत्वपूर्ण उपादान बन सकती है। सरकारी तौर पर हिंदी के प्रयोग के विश्लेषण से हम पाते हैं कि कहीं-कहीं हम वास्तविकता से नज़रें चुरा रहे हैं। यदि हम सरकारी कार्यालयों द्वारा दिए गए आँकड़ों को देखें तो शायद ही कोई कार्यालय मिलेगा यहाँ 50% से कम काम हिंदी में होता होगा। कहीं-कहीं तो 90% से भी अधिक कामकाज हिंदी में होता है। परंतु, हकीकत और हालात इससे भिन्न हैं। हमें इस यथार्थ को स्वीकार करना होगा।

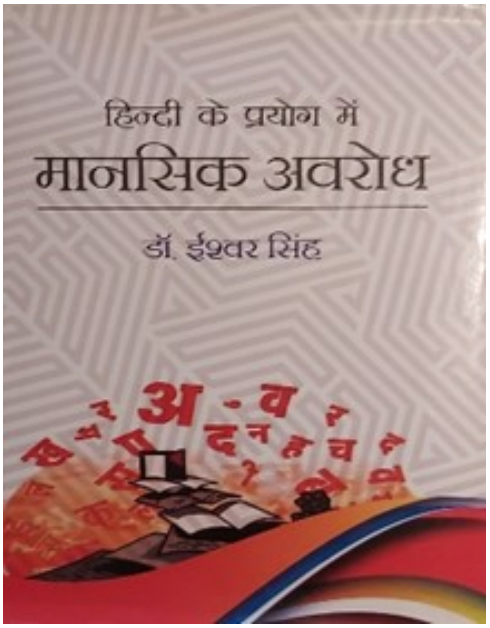


आज हम हिंदी के प्रयोग को लेकर अनेक अवरोधों से जूझ रहे हैं। कहीं-कहीं दिखावे की देशभक्ति है, कहीं अंग्रेजी भाषा का ज्ञान गौरव का विषय बना हुआ है। यहाँ तक कि हिंदी के अज्ञान को अंग्रेजी के ज्ञान के रूप में निरूपित किया जाता है। पुस्तक में इज़राइल की प्रगति में प्राथमिक शिक्षा में हिब्रू भाषा का उदाहरण देकर लेखक ने यह सिद्ध किया है कि 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति के मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय के शूल। अंग्रेजी विज्ञान और तकनीकी की भाषा है, का मिथक टूटता नजर आ रहा है। हम देखते हैं कि इंटरनेट पर हिंदी का प्रयोग अंग्रेजी की तुलना में तेज गति से बढ़ रहा है। अब विदेशी कंपनियां अपने व्यापार-व्यवसाय में हिंदी को तेजी से अपना रही हैं और हिंदी की वैज्ञानिकता को सार्थकता प्रदान कर रही हैं। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हिंदी का प्रयोग बढ़ रहा है। भारत में शिक्षा प्रणाली के जनक माने जाने वाले लॉर्ड मैकाले की नीतियों में बदलाव आ रहा है। हमारी नई शिक्षा नीति इसका ज्वलंत प्रमाण है जो इस दिशा में एक सकारात्मक पहल भी है।

अंत में, पुस्तक में दिए गए तमाम उदाहरणों पर दृष्टिपात करें तो हम पाते हैं कि यह पुस्तक हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोधों का एक आईना है। आम जन भी अन्यान्य कारणों से इन अवरोधों से जूझता नजर आता है। परंतु, एक सौ अड़तीस करोड़ से भी अधिक आबादी वाले देश में एक नागरिक की हैसियत से यदि हम गिलहरी योगदान भी करें और कुछ पत्र, कुछ टिप्पणियां और कुछ प्रविष्टियां हिंदी में करें तो अंग्रेजी के विरुद्ध हिंदी की जंग में हमारा गिलहरी योगदान होगा। सौभाग्य से, जब हिंदी राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में पूर्णतया स्थापित हो जाएगी तब हम स्वयं से आत्म सम्मानपूर्वक नजरें मिला सकेंगे तथा भारत के संविधान की अपेक्षाओं के अनुरूप अपनी मातृभाषा राजभाषा और राष्ट्रभाषा के साथ न्याय कर पाएंगे। डॉ. ईश्वर सिंह की पुस्तक 'हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध' का पठन-पाठन इस दिशा में मील का पत्थर साबित होगी।

**पुस्तक विवरण:**
**हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध**
**लेखक: डॉ. ईश्वर सिंह**
**(आईएसबीएन - 978-93-88130-12-7)**
**प्रकाशक: ए. आर. पब्लिशिंग कंपनी, दिल्ली**
**वर्ष 2019**

डॉ. ईश्वर सिंह
राजेंद्र नगर-गाजियाबाद – उ.प्र.
मोबाइल: 9899137354

पुस्तक समीक्षा

# राम कथा का आधुनिक आख्यान

श्रीमती सुधा गोयल द्वारा लिखित पुस्तक 'मैं सौमित्र' भगवान राम के अनुज लक्ष्मण की अपने जीवन के अंत में राम के प्रति भावनाओं और पश्चात्ताप की अभिव्यक्ति है। यह पुस्तक मुख्यतः राम-सीता तथा राम और लक्ष्मण के संबंधों की एक अलग ढंग से व्याख्या करती है। पुस्तक में बहुत सारी स्थापित मान्यताओं और धारणाओं का खंडन किया गया जो लेखिका की सोच पर वर्तमान पारिवारिक सरोकारों के प्रभाव को रेखांकित करता है। पुस्तक राम के वनवास से लेकर राम द्वारा लक्ष्मण के परित्याग तक की कथा के प्रसंगों का रोचक विश्लेषण प्रस्तुत करती है। भगवान राम द्वारा दुर्वासा ऋषि वाले प्रसंग पर लक्ष्मण को त्याग देने के बाद, लक्ष्मण अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति अपनी पत्नी उर्मिला के समक्ष करते हैं। यह पुस्तक लक्ष्मण और उर्मिला के संवाद के रूप में लिखी गई है। संवाद इतने रोचक ढंग से लिखे गए हैं कि विषयवस्तु में पाठक का कौतुहूल निरंतर बना रहता है। लक्ष्मण द्वारा वन गमन से लेकर लंका विजय और वहाँ से लौटने के बाद अयोध्या की घटनाओं का विवरण अत्यंत रोचकता के साथ किया गया है। उर्मिला ने अपनी व्यक्तिगत राय और बहुत सारी घटनाओं पर शंका प्रकट कर लेखिका के मंतव्य को प्रभावी ढंग से संप्रेषित किया है। यह पुस्तक कहीं भी पाठक को भारी नहीं लगती और उसकी विषयवस्तु और भाव प्रवाह बेहद सशक्त है। भाषा, शैली और विषयवस्तु के लिहाज से 'मैं सौमित्र' एक बेहतरीन कृति है।

पौराणिक कथाओं में बहुत सारी बातें ऐसी होती हैं, जो वैज्ञानिकता और व्यावहारिकता की कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं और जो अंधविश्वास से प्रेरित हुई प्रतीत होती हैं। जब उनकी वैज्ञानिकता पर प्रश्न उठाए जाते हैं तो लोग प्रश्नकर्ता की धार्मिक आस्था को सवालों के कठघरे में खड़ा करना प्रारंभ कर देते हैं। श्रीमती सुधा गोयल ने 'मैं सौमित्र' में ऐसी कई शंकाओं का समाधान प्रस्तुत किया है और उन्हें एक व्यावहारिक रूप दिया है। सीता स्वयंवर में शिव धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने के लिए बहुत से योद्धा आए, किंतु उनमें से कोई भी धनुष को हिला तक नहीं पाया। राम शारीरिक रूप से अत्यंत बलशाली हों, ऐसा वर्णन कहीं नहीं मिलता। फिर भी जिस धनुष को कोई योद्धा हिला तक नहीं पाता वे उस पर प्रत्यंचा भी चढ़ा देते हैं और उसे तोड़ भी देते हैं। तार्किक रूप से यह बात कहीं शंका पैदा करती है, विशेष रूप से तब, जब उसी धनुष को सीता आराम से उठा लेती हैं। 'मैं सौमित्र' में लेखिका ने इस शंका का निवारण करते हुए बताया है कि उस धनुष को उठाने की एक तकनीकी थी जिसकी जानकारी सीता को थी। इसी प्रकार सीता की अग्नि परीक्षा के दौरान अग्नि में न जलने वाली बात भी धार्मिक अंधविश्वास के बल पर पाठक की समझ में आती है अन्यथा वैज्ञानिक ढंग से यह असंभव है। अग्नि तो हर चीज

को जला ही डालती है। 'मैं सौमित्र' में सीता के अग्नि प्रवेश के बाद उनके बचने की घटना यथार्थ के निकट है। सीता के अग्नि में प्रवेश करते ही राम सहित सभी लोग उन्हें आग से बचाते हैं और उनके जले हुए कपड़ों को शरीर से अलग करते हैं। इसके बाद सीता के शरीर पर जलने के जख्म भी रह जाते हैं जिन पर लेप लगाया जाता है। अंत समय में सीता द्वारा पृथ्वी में समा जाने की घटना भी व्यावहारिक रूप से संभव नहीं लगती। स्थापित मान्यताओं के अनुसार जब सीता अपने सतीत्व और पति धर्म के नाम पर पृथ्वी का आह्वान करती हैं कि वह उसे अपनी गोद में ले ले, तो पृथ्वी फट जाती है और सीता उसमें समा जाती हैं। 'मैं सौमित्र' में सीता पृथ्वी में नहीं समाती, अपितु अपने व्यथा को सुनाकर पिता जनक के कंधों से लगकर झूल जाती हैं और प्राण त्याग देती है। उनके पार्थिव शरीर को अयोध्या लाया जाता है। पुस्तक का यह व्यवहारिक पक्ष उसे और पठनीय और स्वीकार्य बना रहा है। इस मायने में रचनाकार का प्रयोग काफी हद तक सफल रहा है।

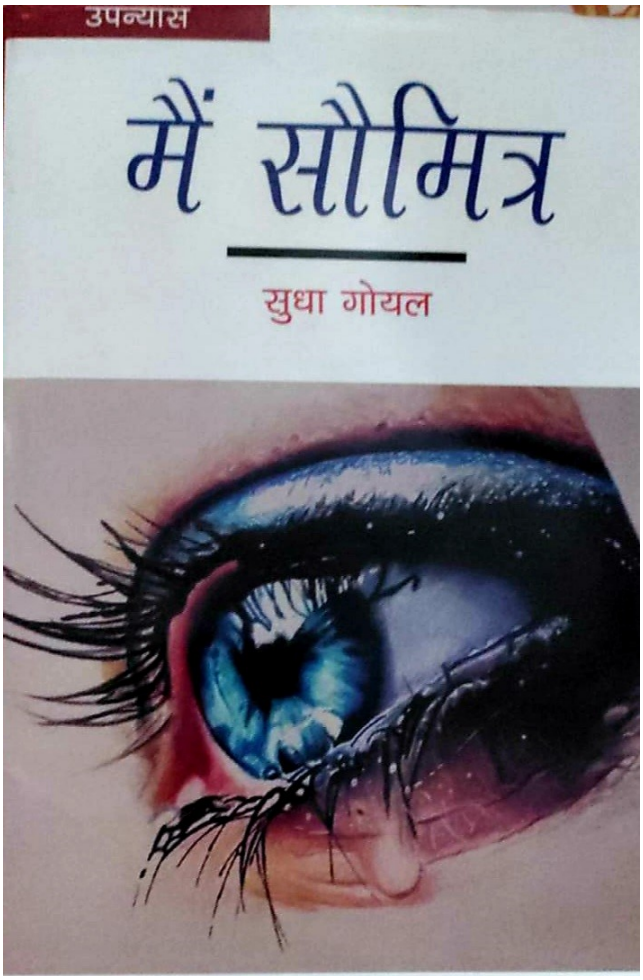


'मैं सौमित्र' का तीसरा पक्ष, जो सबसे ज्यादा पाठक का ध्यान आकर्षित करता है और उसे करता है, वह भगवान राम और लक्ष्मण के चरित्र के अवमूल्यन का है। भगवान राम को विष्णु का अवतार और मर्यादा पुरुषोत्तम माना गया है और उसी रूप में आज हिंदू समाज उनका स्मरण करता है, आराधना करता है। लक्ष्मण को भी शेषनाग का अवतार माना जाता है। इसलिए अंत समय में लक्ष्मण सरयू नदी में समा जाते हैं क्योंकि शेषनाग पानी में ही रहता है। 'मैं सौमित्र', राम और लक्ष्मण की उस देवमयी छवि को खंडित करती है। यह एक प्रकार से लक्ष्मण के राम के प्रति मानसिक विद्रोह का चित्रण अधिक दिखाइए देती है। यह पुस्तक लक्ष्मण के पश्चाताप की अभिव्यक्ति बन गई है कि उसने जीवन भर राम के आदेशों का आँख बंद कर अनुपालन क्यों किया। लक्ष्मण के जिस चरित्र की मिसाल श्रेष्ठ भाई के रूप में दी जाती है, उसी पर लक्ष्मण की अंतिम प्रतिक्रिया एक सामाजिक और धार्मिक मान्यता को चोटिल करती है। उर्मिला से संवाद करते हुए लक्ष्मण बार-बार स्वयं को बुद्धिहीन बताते हैं, कठपुतली बताते हैं और राम के सही और गलत सभी फैसलों को मानने के लिए 'मैंने ऐसा क्यों किया' की मुद्रा में दिखाई देते हैं। लक्ष्मण और उर्मिला का संवाद, एक प्रकार से सामान्य देवर देवरानी का संवाद दिखाई देता है विशेषकर जब वे राम के बारे में बात करते हैं। कई जगह पर उन्होंने राम को अवसरवादी और मौके के अनुसार सिद्धांत बदलने वाला व्यक्ति बताया है। लेखिका का यह प्रयोग राम की महिमा को कम करता है और पाठक को चुभता है। सीता द्वारा शिव धनुष

को संचालित करने की विधि को चुपके से राम को बता देना पूरे स्वयंबर को एक नाटक बना रहा है जो उपस्थित योद्धाओं के साथ योजनाबद्ध षड्यंत्र दिखाई देता है। उर्मिला से यह रहस्योदघाटन कराना भी पाठक को बहुत चुभता है। सीता जैसी सती से भारतीय जनमानस इस प्रकार की अपेक्षा नहीं करता। राम बड़े भाई थे और इस नाते, स्थापित सामाजिक परंपराओं के अनुसार थी पहले उन्हीं का विवाह होना चाहिए लेकिन लक्ष्मण की यह शिकायत कि धनुष यज्ञ में उन्हें भी तो धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने का मौका मिलना चाहिए था, स्वयं लक्ष्मण के चरित्र को छोटा साबित करती है। कौशल्या और कैकयी की सुमित्रा के बारे में अमर्यादित बातें उनके चरित्र को कमतर बनाती हैं। लेखिका का यह प्रयोग पाठक को असहज करता है। यह पाठक की स्थापित मान्यताओं पर चोट की तरह है और मुझे इस पुस्तक में इस प्रयोग की कोई उपयोज्यता भी दिखाई नहीं दी। मेरा मानना है कि इस प्रयोग के बिना भी पुस्तक के पूरे कथ्य को इतने ही प्रभावशाली ढंग कहा जा सकता था। एक टिप्पणी और, पुस्तक की प्रूफ रीडिंग में बहुत काम बाकी रह गया है।

'मैं सौमित्र' छोटे से कलेवर में संपूर्ण रामायण का एक संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत सकती है। यह पुस्तक उन लोगों के लिए बहुत उपयोगी साबित हो सकती है जिन्होंने रामायण या रामचरितमानस का अध्ययन नहीं किया है, किंतु इससे युवा पीढ़ी और पाठक के मन में राम और लक्ष्मण के चरित्र में बहुत से ऐसे दोष अंकित होने का जोखिम है, जो सामान्य धार्मिक आस्था से मेल नहीं खाते। हाँ, यह पुस्तक सीता के चरित्र को जरूर ऊँचाइयाँ प्रदान करती है। सीता और उर्मिला के त्याग को और रावण के पराभव में सीता, उर्मिला, कैकयी और सूपर्णखां की भूमिका को विशेष रूप से रेखांकित करने से ऐसा लगता है कि शायद लेखिका का उद्देश्य रामायण के नारी पात्रों के महत्व को प्रतिपादित करना रहा है। यदि ऐसा है, तो इसमें किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती किंतु इसके लिए यह कतई आवश्यक नहीं था कि भगवान राम और लक्ष्मण के चरित्र को छोटा किया जाए।

**पुस्तक विवरण :**

**मैं सौमित्र**

**लेखिका: सुधा गोयल**

**प्रकाशक: नमन प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली**

**ISBN: 978 -93-90868-78-0**

**प्रकाशन वर्ष 2022**

(Volume-1, issue-2)

शुभोदय